चतुर्थ अध्याय

"नागार्जुन के उपन्यासों में चित्रित ग्राम जीवन की समस्याएँ"

चतुर्थ अध्याय

''नागार्जुन के उपन्यासों में चित्रित ग्राम जीवन की समस्याएँ''

1) अंधविश्वास की समस्या -

अ) अंधविश्वास।

ब) भूत-प्रेत-चुडैल- डायन संबंधी अंधविश्वास।

क) मंत्र-तंत्र, झाड-फूंक, जडी-बूटी, जादु-टोणा संबंधी अंधविश्वास।

ड) शकुन-अपशकुन संबंधी अंधविश्वास।

इ) पाप-पुण्य संबंधी अंधविश्वास।

2) शोषण की समस्या -

अ) जमींदारोंद्वारा शोषण की समस्या।

ब) पुलिसद्वारा शोषण की समस्या ।

क) अंग्रजोंद्वारा शोषण की समस्या।

ड) धार्मिक व्यक्तिद्वारा शोषण की समस्या।

इ) नारी शोषण की समस्या।

3) जातीय भेदाभेद की समस्या।

4) भ्रष्टाचार की समस्या।

5) अशिक्षा की समस्या।

6) यौन संबंधों की समस्या।

7) अन्य समस्याएँ -

अ) नशा-पान की समस्या।

ब) दारिद्रयता तथा भूख की समस्या।

क) प्राकृतिक आपदा की समस्या।

निष्कर्ष

चतुर्थ अध्याय

''नागार्जुन के उपन्यासों में चित्रित ग्राम जीवन की समस्याएँ''

प्रास्ताविक :-

मनुष्य निर्मित सामाजिक व्यवस्था में विभिन्न जैविक तथा मानसिक आवश्यकताओं की पूर्ति की जाती है। मानव निर्मित इस सामाजिक व्यवस्था में प्रत्येक मनुष्य एक दूसरे पर अवलंबीत है। मानव एक दुसरे पर अवलंबीत होने से अपना जीवन समूह में रहकर बिताता है। मनुष्य के विकास और उनके गुण-दोष का विवेचन विभिन्न सामाजिक समुहों में रहकर ही होता है। प्रत्येक मनुष्य पर ऐसे सामाजिक समूहों का प्रभाव दिखाई देता है। इसीसे ही समाज और संस्कृति की प्रगति भी होती है। प्रत्येक व्यक्ति के आचार-विचार, रहन-सहन आदि पर प्रभाव रहता है। इसी कारण फ्रांसीस ई मेरिल ने ''मानव को एक सामाजिक प्राणी (सोशियल बीयिंग) कहने की अपेक्षा इसे एक सामुहिक प्राणी (ग्रुप ॲनिमल) कहना उचित समझा है।''[1] भारतीय संस्कृति को सारे विश्व में उच्च संस्कृति के रुप में माना गया है क्योंकि भारतीय समाज व्यवस्था में मनुष्य के जन्म से लेकर मनुष्य के अंत तक अनेक संस्कार किये जाते है। बच्चा जन्म लेते ही उसका नामकरण, विवाह से लेकर मृत्यु के उपरांत भी उसपर विधिपूर्वक संस्कार होते है।

वस्तुत: समाज का निर्माण मनुष्य से ही हुआ है। धीरे-धीरे समाज में कुछ ऐसे नियम तैयार किये, जिससे मानव सही दिशा में अपना जीवनयापन करें। लेकिन अनपढ़, अज्ञानी जनों ने सामाजिक पहलूओं को अधिकतर महत्त्व दिया। परिणामत: समाज संस्कृति के विश्वास के बदले अंधविश्वास का निर्माण हुआ और यही अंधविश्वास समाज में आज तक दिखाई देता है। अंधविश्वास का पालन नगरों की अपेक्षा ग्रामों में अधिक दिखाई देता है। जमीनदार, धार्मिक व्यक्ति अपनी स्वार्थ पूर्ति के लिए अनपढ़ ग्रामीण लोगों का शोषण करते है। लोग रुढ़ी परंपरा की जंजीर में अटक गये। रीति-रिवाज का वे जी-जान से पालन करते है। इसीकारण उनकी आर्थिक स्थिति कमजोर होती गई। व्यवसाय के आधार पर वर्णव्यवस्था निश्चित हो गयी। परिणामत: छुआछूत की समस्या बढ़ गई।

समाज में निरंतर पिसा जाने वाला वर्ग अछूत समझा गया। अत: उन्हें आर्थिक, धार्मिक, सामाजिक अधिकारों से वंचित रखा गया। धीरे-धीरे जातियता की निर्मिती हो गई। धीरे-धीरे इसी जातीयता ने भयावह रुप धारण कर लिया। गाँव के जन-जीवन में जातीयता की पकड़ इतनी मजबूत हो गई की लोग एक दूसरे को जाति से पहचानने लगे। इसीतरह ग्रामीण जन-जीवन में बहुमुखी समस्याओं का निर्माण हुआ और इन समस्याओं को प्रकाश में लाने का युवको में चेतना जागृति करने का प्रयास साहित्यकारों ने किया। उनमें नागार्जुन ने अपने उपन्यास 'रतिनाथ की चाची', 'बलचनमा', 'नई पौध', 'बाबा बटेसरनाथ', 'दुखमोचन' आदि में ग्रामजीवन के बहुमुखी समस्याओं को उजागर किया तथा उसके प्रति चेतना लाने का प्रयास किया है। नागार्जुन ने ग्रामीण समस्याओं को ही नहीं तो गाँव की आंतरआत्मा को भी स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है। यही कारण है कि, इन उपन्यासों में स्थुलता56 नहीं सुक्ष्मता की अभिव्यक्ति कलात्मक ढंग से हुई है।

धीरे-धीरे ग्राम जीवन में विकास की रोशनी दिखाई दे रही है। मानव-जीवन आज विकसित हो रहा है। नये, शोध, संशोधन, प्रगति के साधन. सरकार की सुधार नीति आदि में प्रगति हो रही है। अज्ञानी, अनपढ़, आवारा, अंधविश्वासी, ग्रामवासी आज चेतित बनकर ग्रामजीवन में चेतना की उमंग उत्पन्न कर रहे है। जिस तरह विकास होता है, उसी तरह समस्या भी पैदा होती है। इसी तरह विकसित होने वाले ग्रामजीवन में विकास के साथ कई समस्याएँ निर्माण हो गयी है। कई समस्याएँ प्राकृतिक और कई मानव निर्मित होती है। समस्याएँ चुनौती होती है, बिना समस्या से विकास संभव नहीं है। अत: समस्या के साथ संघर्ष करके मानव विकास का प्रगति फल प्राप्त कर सकता है। साहित्यकारोंने अपने कृतियों में मानवी जीवन में स्थित समस्याओं पर प्रकाश डाला है। 'ग्रामजीवन' भी इसके लिए अपवाद नहीं है। नागार्जुन ने भारतीय ग्राम जीवन की स्थिति पर विचार करते हुये मौलिक कृतियों का सृजन किया है। प्रस्तुत अध्याय में हम ऐसे ही कुछ उपन्यास कृतियों के माध्यम से भारतीय ग्रामजीवन में स्थित कुछ समस्या पर विचार करेंगे। ग्राम जन-जीवन में मुख्यत: समस्याएँ, उनका स्वरुप, स्थिति, परिणाम आदि के साथ ग्रामजीवन का विकास आलोच्य उपन्यासों में चित्रित हुआ है,

इस पर हम यहाँ सोचेंगे -

1) अंधविश्वास की समस्याएँ :-

अ) अंधविश्वास :-

भारतीय जनता का यह विश्वास है कि प्रत्येक सुख-दु:ख का निर्माता ही परमेश्वर होता है। ईश्वरीय सत्ता पर विश्वास रखना ही धर्म का मूल स्थान है, और समाज व्यवस्था को संचलित करने वाले तत्वों के अंतर्गत धर्म का स्थान होता है। 'अंधविश्वास' को दर्शनशास्त्र में 'ईश्वरवाद' कहा है, मगर विज्ञान ने इसे 'अंधविश्वास' कहा है। अंधविश्वास अशिक्षा, अज्ञान का परिणाम है। शिक्षा के स्तर पर गाँव शहरों की तुलना में बहुत पीछे है। इसी वजह से गाँव का अधिकांश जन-जीवन अभी तक अज्ञान, अशिक्षा के साथ अंधविश्वास से जुडा हुआ है। अंधविश्वास के बारे में विवेकी राय का कथन है - ''गाँव के अंधविश्वासों से काटकर यदि पृथक कर दिया जाय तो वह गाँव नहीं रह जाता है। गाँव का अर्थ है विश्वास और शताब्दियों का यह विश्वास अंधकाराविष्ट रहा। अत: 'अंधविश्वास' होकर उसके साथ इस प्रकार जुड गया है कि अनिवार्य अंग हो गया है।''[2]

ग्रामों में स्थित जनजातियाँ अज्ञानी, भोली-भाली धार्मिक प्रवृत्ति की होने के कारण समाजमान्य परंपरागत नीति का धार्मिक मान्यताओं और सांस्कृतिक परंपरा का निर्वाह करती आ रही है। परिणामस्वरुप उनमें श्रद्धा-अंधश्रद्धा की समस्या का निर्माण होता जा रहा है। पंडित नेहरुजी ने अंधविश्वास की भावना को समस्या का मूल कारण मानते हुए कहा है, ''भारत की अधिकांश सामाजिक समस्याएँ जैसे जाति-पाति, दहेज, प्रथा, सांप्रदायिकता, बाल-विवाह आदि के पीछे मूल कारण अंधविश्वास एवं रुढियों का आँखे मूँदकर पालन करना ही है।''[3] हिंदी के स्वातंत्र्योत्तर उपन्यासों में ग्रामीण जन-जीवन में प्रचलित धर्म संबंधी मान्यताओं, अंधविश्वासों, भूत-प्रेत, चुडैल-डायन संबंधी विश्वासो, पाप पुण्यसंबंधी मान्यताएँ, शकुन-अपशकुन संबंधी धारणाओं, मंत्र-तंत्र, झाड-फूँक संबंधी कल्पनाओं पर विस्तार से प्रकाश डाला है।

नागार्जुन ने मिथिला भूमिपर लिखित **'रतिनाथ की चाची'** (1948) रचना में अनेक प्रकार के अंधविश्वासों पर प्रकाश डाला है। यहाँ सौराठ के मेले में विवाह में बिकाऔ प्रथा है। साथ-ही-साथ मनौतियाँ मांगना, मुंडन-छेदन, बलि चढाना, पर्दा-प्रथा, पूजा-अर्चा, जादू-टोना, उपवास या व्रत रखना आदि कई अंधविश्वास लोग मानते है, गाँव में लोगों का विश्वास तारा बाबा पर है। उन्हीं के कहने पर जयनाथ चाची का गर्भ गिराने का यंत्र तैयार करता है। ताराबाबा के बारे में अनेक किवंदन्तियाँ प्रचलित है; जैसे चोर का घर में ही अटक रहना, मरी हुई गाय को जीवित करना आदि, लोक सच मानते है। गाँव के लोग भाँग को ताराबाबा का प्रसाद मानकर पीते है। जयनाथ भी भाँग प्रसाद मानकर पीता है, जिसकी उसे आदत पड़ जाती है। रतिनाथ जूगल कामति के कटोरा चलाने से वह पकडा जायेगा। इस प्रकार यहाँ अनेक शकुन-अपशकुन भी रहे है, जैसे विद्या आरंभ के लिए बृहस्पतिवार को अच्छा मानना आदि कई अंधविश्वास यहाँ के लोगों में दिखाई देते है।

नागार्जुन ने अपनी दुसरी रचना **'बलचनमा'** (1952) में भी अंधविश्वासों के साथ ग्रामीण जन-जीवन का चित्रण किया है। यहाँ के लोग भूत-प्रेत, ओझा-मुनि पर अत्याधिक विश्वास रखते है। इसीकारण सुखिया पर भूत सवार देख मालिकाइन भगवती मैया को मनाने लगती तथा झाड-फूँक, पूजा-पाठ, टोना-टापर करने वाले ओझा दामो ठाकुर को बुलाती है और दामो ठाकुर उसका भूत निकालता है। इतना ही नहीं तो फसल के लिए, बारीश के लिए, बाढ़ न आने के लिए, मनौती के रुप में काली माई के सामने दो बकरों की बलि देना, बरहमबाबा को फूल-छत्र का दान देना, बाबा कुसेकरनाथ को घी-दूध अर्पित करना, आदि कई धार्मिक रस्म, अंधविश्वास के रुप में अपनाये जाते हैं। यहाँ रस्म-रिवाज, शगुन को भी माना जाता है और उसका पालन भी किया जाता है। बलचनमा की शादी के पहले शगुन के रुप में डोरा-सिंदूर आदि भेजा जाता है।

नागार्जुन के **'नई पौध'** (1953) उपन्यास में ग्रामजीवन में स्थित अंधविश्वास पर प्रकाश डाला है। बिसेसरी का ब्याह टुट जाने पर टुनाई और समुचा परिवार हाथ जोडकर भगवान से मनौतियाँ मनाता था, कि चाहे जैसे भी हो, बिसेसरी का ब्याह अगहन के लगन में अवश्य हो जाये। और

बिसेसरी भी मनौतियाँ करती है कि आने वाले अगहन में अगर कोई बीस-पच्चीस साल का दुल्हा उसके लिए मिल गया और शादी हो गई तो वह चाँदी की छोटी सी खुबसूरत बसुली (बाँसुरी) गढवायेगी और कन्हैया के हाथो में थमा देगी। यहाँ धार्मिक अंधविश्वास का चित्रण मिलता है। दिगंबर मल्लिक की नानी हनुमान चालीसा, नाग लीला, दान लीला आदि पढ़ती थी। इसीतरह पूजा-पाठ का वर्णन भी मिलता है। गाँव में आसिन के महिने में पितरपच्छ और मातृनवमी के दिन आते है। मातृ नवमी के दिन अपनी-अपनी माँ, नानी, सास, दादी और परदादी के लिए प्रति एक ब्राह्मण को भोजन खिलाया जाता है। "पंडिताइन ने अपनी नानी सास और सतिया सास के लिए चार ब्राह्मणों को न्यौता दिया - चारो छोकरे बाभन थे क्योंकि सयानी मूर्तियों के लिए भोज्य वस्तुएँ काफी और अपेक्षित है।"[4] इसीतरह मातृनवमी में ब्राह्मण को खाना खिलाना धार्मिक अंधविश्वास का प्रमाण है। बिसेसरी की शादी दुसरी बार जब वाचस्पति से तय की जाति है तो दुर्गानंद और दिगंबर अनुवंशिक परंपरानुसार गोत्र देखते है। अगर लडके का गोत वत्स और लडकी का काश्यप हो तो ब्याह होता है। इसी तरह के अंधविश्वास यहाँ है। टुनाई पर गिरस्ती का सारा भार आने से पढाई में बाधा होगी, इस पर टुनाई कहता है कि वह इस बार पास नहीं होगा, ऐसी अशुभ बाते न करने को पंडिताइन कहती है तो वह कहता है कि क्या होठों को सिलाकर गूँगा बन जाऊँ ? यहाँ यह बात पंडिताईन को अशुभ लगती है। यहाँ अशुभ बातों का चित्रण भी मिलता है। इसीतरह यहाँ अंधविश्वासों का चित्रण हुआ है।

नागार्जुन के '**बाबा बटेसरनाथ**' (1954) में चित्रित रुपडली का ग्राम जन-जीवन अज्ञान, अशिक्षा से पूरी तरह ढका हुआ है। जिसके कारण समाज खोखला बना है। ईश्वर पूजा के समान लोग वृक्षपूजा और ब्रह्मबाबा की पूजा करते है। बरगद की पूजा करके स्त्रियाँ मिन्नते माँगती है, मनोरथ पूर्ण होने पर बकरे की बलि दी जाती है। बारीश के लिए लोग देवताओं की उपासना करते हैं, ब्राह्मणों ने मिट्टी के ग्यारह लाख शिवलिंग बनाये। "एक रात जब मर्द सो गये तो गाँव भर की औरते दस पंद्रह गुटों में बँट गई। तालाब से मेंढक पकड लाये गये, उन्हें ओंखलियो में मुसलों से कुचला गया -- पंडितों ने महीनों तक चंडी-पाठ किये, साधकों ने एक-एक मंत्र का लाखों जपा --- सब व्यर्थ।"[6] बारिश के

लिए लोग सब कुछ करते है। साधक मंत्र को लाखों बार जपते है फिर भी बारिश नहीं होती। इसी प्रकार अंधविश्वास के कारण लोग अस्पताल में जाकर दवा नहीं लेते। इसीतरह से कई अंधविश्वास रुपडली के लोग मानते है। यहाँ स्पष्ट है कि दवा की अपेक्षा भगवान की कृपा एवं दुवा पाना ही वे महत्वपूर्ण मानते है। यहाँ अज्ञान के साथ ही साथ उनकी मानसिकता, भावुकता, मजबूरी एवं कमजोरी भी स्पष्ट लक्षित होती है।

नागार्जुन के **'दुखमोचन'** (1957) उपन्यास में टमकाकोइली ग्रामजीवन की समस्याओं का चित्रण किया है। रामसागर की माँ के मौत के दिन सुखदेव, वहाँ नहीं जाता क्योंकि वह शालीग्राम की पूजा करता है, और वहाँ गया तो पूजा नहीं कर पायेगा - '' सुखदेव ने कहा हाँ मध्दू, बबुअन ठीक कहते है । --- और --- और मैं रामसागर की माँ के शव को कंधे जरुर लगाता, किन्तु फिर तीन दिन हमारे शालीग्राम बिना पूजा ही पडे रहेंगे, शंख में पानी भरकर कौन उन्हें नहलाएगा और कौन करेगा सहस्त्रशीर्षा मंत्र का पाठ ? समझते हो न मधुकांत ?''[6] दुखमोचन की मामी बारह महिने सुबह-सुबह नहाकर पिंडी की शकल में स्थापित दुर्गा पूजा, इष्ट देवी काली का एक अक्षर वाला बीजमंत्र हजार बार 'क्लीं' जपती थी। इसी तरह यहाँ धार्मिक अंधविश्वास का वर्णन मिलता है।

ग्रामजीवन में अभी तक अंधविश्वास की अधिक मात्रा दिखाई देती है। इसके पीछे अज्ञान, अंधविश्वास, रुढ़ी-परंपरा के प्रति निष्ठा, विज्ञान का अभाव आदि कारण लक्षित होते है। ग्राम जनजीवन की मानसिक दुर्बलता इससे स्पष्ट होती है। बलि देना, मनौतियाँ मानना, बीमारी हटाना, किसी को देवता का अवतार मानना आदि के पीछे अनेक विश्वास एवं क्रिया-कर्म तथा मनोधारणा अंधविश्वास के प्रतीकही है। इन लोगों को अशिक्षा ने ही उन्हें अंधविश्वास की ओर अधिक मात्रा में उन्मुख किया है। धर्म संबंधी गलत धारणा, मृत्यु का भय, पाप पुण्य की मान्यताएँ आदि के कारण भी अंधविश्वास को बढावा मिल रहा है ऐसा लगता है।

ब) भूत-प्रेत-चुडैल-डायन संबंधी अंधविश्वास :-

गाँव के मनुष्य का जीवन अज्ञान, सभ्यता, संस्कृति और वैज्ञानिक प्रगति से दूर, भ्रम-भय, भाग्य आदि से संचलित रहा है। मानसिक दुर्बलता, अंधश्रद्धा इन दोनों का एकत्रित रुप ही भूत-प्रेत-चुडैल डायन ही है। गाँव के लोग आज भी इसपर विश्वास करते है। अतृप्त आत्मा, भूत-पिशाच्च, डायन, चुडैल बनकर रहती है ऐसी उनकी धारणा है। गाँव में कोई अघटित भयावह, दानवी घटना घटती है तो उसका संबंध भूत-पिशाच्च के साथ जोडने की उनकी प्रवृत्ति है। ग्रामीण जन-जाति बीमारी दूर करने के लिए, संकट से मुक्ति के लिए भूत-प्रेत का आधार लेती है। अमरसिंह रणपतिया के अनुसार - ''शिक्षा प्रचार और प्रसार से ऐसे विश्वासों में ढील आना स्वाभाविक है। कई अंधविश्वास सुसंस्कृत लोगों पर भी छाये हुअे हैं। विज्ञान के चमत्कारों ने इस प्रकार के विश्वासों को अवश्य झक झोरा है।''[7] नागार्जुन के उपन्यासो में इसका यथार्थ चित्रण किया गया है।

नागार्जुन के '**बलचनमा**' में सुखिया पर कभी-कभी भूत सवार होता तो वह चिख मारकर रो पडती थी। वह नंगी होकर जीभ निकालती हुई कहती - ''ही ही ही ही मैं काली हूँ, पोखर पर जो बौना पीपल है उसी पर रहती हूँ, खा जाऊँगी समूचा गाँव। बकरा दो बकरा ---।''[8] सुखिया का भूत उतारने के लिए जब दामो ठाकुर को बुलाया जाता तब वह शांत होती है। बलचनमा इसके बारे में कहता है - भूत या प्रेत अक्सर बाँझ औरतों को ही पकडता है। सूखिया की मानसिक कमजोरी की वजह से ऐसी हरकते वह करती है ऐसा लगता है। मगर गाँववाले इसे भूत-पिशाच्च का रुप देते है।

नागार्जुन का विश्वास है कि पिछडा हुआ जन-समाज धार्मिक अंधविश्वास एवं पाखंडों, भूत-प्रेतों में अगाध विश्वास रखते है। 'रतिनाथ की चाची' में रतिनाथ के मित्र किताबें खो जाने पर चोर के लिए कटोरा चलवाने की योजना बनाते है। यहाँ भी भूत-प्रेत की सहाय्यता ली जाती है।

क) मंत्र-तंत्र, झाड-फूंक, जडी-बूटी, जादु-टोना संबंधी अंधविश्वास :-

अनपढ एवं अज्ञान के कारण ग्रामीण जन-जीवन में भूत-पिशाच्च आदि संबंधि अंधश्रद्धाओं की मान्यताएँ रही है। परिणामत: उस पर उपाय के रुप में मंत्र-तंत्र-जादू टोना तथा

बीमारी दूर करने के लिए झाड फूंक, जडी-बूटी का प्रयोग किया जाता है। आधुनिक ज्ञान, विज्ञान, चिकित्सा सुविधा का अभाव होने के कारण इसे बढ़ावा मिल रहा है। इन लोगों को दवा की अपेक्षा जडी-बूटी के प्रयोग पर अधिक विश्वास है। स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यासों के आधार पर गाँव में स्थित मंत्र-तंत्र, जादूटोना, जडी-बूटी, झाड-फूंक संबंधी मान्यताओं में से निर्मित अंधविश्वास का चित्रण आया है।

नागार्जुन के '**बलचनमा**' (1962) में सुखिया पर जब भूत सवार होता है तब छोटी मालिकाइन झाड-फूंक, पूजा-पाठ, टोना-टापर करने वाले ओझा दामो ठाकुर को बुलाती है। दामो ठाकुर आते ही ओझा झाडना, फूँक मारना शुरु कर देता। इसी तरह नागार्जुन के '**बाबा बटेसरनाथ**'(1954) में बाढ के दिनों में चार आदमी मर गये लेकिन उस समय मंत्र-तंत्र, झाड फूंक करने वाला ओझा गुणी दुसरे गाँव से लोग नहीं मँगवा सके इसका उन्हें बहुत अफसोस हुआ। बाढ़ के बाद गाँव में बीमारी फैल गयी लेकिन किसी ने भी दवा का नाम नहीं लिया। सारे गाँव के लोग बीमारी मिटाने के लिए पंडितों और ओझा, गुणियों के ही पास जाते थे और बीमारी हटाने के लिए मंत्र-तंत्र, झाड-फूंक का प्रयोग करते है। इसी अंधविश्वास के कारण कई लोगों की जान चली जाती लेकिन अज्ञानता कारण वे ग्राम जन समझ नहीं पाते।

नागार्जुन के '**दुखमोचन**' (1957) में भी यही स्पष्ट होता है कि जो काम डॉक्टर एवं उनकी दवाइयाँ नहीं कर पाती, वही काम इन लोगों के झाड-फूंक से होते है। इन लोगों के अज्ञान और अशिक्षा के कारण ये अंधविश्वास आज तक जीवित रह चुके हैं। धर्म, ईश्वर, भूत-पिशाच्च आदि के बारे में ये अंधविश्वास इन लोगों में निवास कर रहे है। आज शिक्षित, स्वयंसेवी लोग विविध संस्था इन लोगों में स्थित अंधविश्वासों को हटाने का काम कर रहे है।

ड) शकुन - अपशकुन संबंधी अंधविश्वास :-

गाँव के लोग अंधविश्वासी होने के कारण शकुन-अपशकुन पर विश्वास रखते है। अपने जीवन में घटनेवाली हर एक घटना का भविष्य के साथ संदर्भ जोड़ देते है। नागार्जुन ने इस पर भी प्रकाश डाला है।

नागार्जुन के **'रतिनाथ की चाची'** (1948) में जयनाथ अपने बेटे रतिनाथ को विद्या का आरंभ बृहस्पतिवार को करने के लिए कहता हैं। अर्थात जयनाथ बृहस्पतिवार को शिक्षा का आरंभ शुभ दिन मानता है। नागार्जुन ने **'नई पौध'** (1953) में टुनाई जो दसवी कक्षा में पढ़ता है। उस पर सारे काम का बोझ है और पढाई में बाधा उत्पन्न हो गयी है। वह कहता है कि वह इस बार पास नहीं होगा। यह बाते पंडिताइन को अशुभ लगती है। टुनाई कहता है कि क्या होठों को सिलाकर गूँगा बन जाऊँ? ऐसी अशुभ बातों से अशुभही होता है ऐसी पंडिताइन की धारणा है। इसी तरह अशुभ बातों से अपशकुन होना, इसी अंधविश्वास का यहाँ चित्रण आया है। नागार्जुन के **'बाबा बटेसरनाथ'** (1954) में जैकिसुन की दादी अकाल के बारे में अपनी पति से कहती है - " देखते होन ? इस बार फागुन में ही कैसी मनहुसी छा गई है रात को काला कौआ चीखता रहता है कई - कई। दिन के समय गीदड हुआँ-हुआँ करता है - अब के भारी अकाल पडेगा देख लेना।"[9] यहाँ शकुन-अपशकुन का संबंध भविष्य में घटनेवाली घटना से जोडने की मानसिकता यहाँ बनी है, जो अज्ञान का प्रतीक है।

ग्रामीण लोग अज्ञानी, अशिक्षित विज्ञान या वैज्ञानिक विचारों से दूर, धर्म-जाति, देवी-देवता के गहरे प्रभाव से प्रभावित भगत-पंडित-मंत्रिकों के दबाव में दबे हुअे होने के कारण शकुन-अपशकुन पर गहरा विश्वास रखते हैं, यहाँ यही स्पष्ट हुआ है।

आलोच्य उपन्यासों में इसके अतिरिक्त बलि चढाना, मनौतियाँ माँगना, व्रत या उपवास रखना, पूजा-पाठ करना, शिवलिंग की पूजा करना, पेड की पूजा करना, पापमुक्ति के लिए देवी देवताओं की यात्रा करना तथा प्रायश्चित करना आदि के बारे में अंधविश्वास देखने को मिलता है।

गाँव में स्थित अंधविश्वासों को दूर करने का प्रयास धीरे-धीरे हो रहे हैं। आज के ग्रामीण युवक शिक्षित हो रहे हैं इसीकारण इन अंधविश्वासों की कड़ी में कुछ ढ़ील अवश्य दिखाई देती है। साथ ही साथ अंधविश्वास निर्मुलन समिति, सेवाभावी संस्था, विज्ञान जत्था से गाँव में स्थित अंधविश्वासों को दूर करने का प्रयास हो रहा है।

इ) पाप-पुण्य संबंधी अंधविश्वास :-

धर्म को भारतीय समाजव्यवस्था में महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है। जीवनक्रम में घटनेवाली घटनाओं को पाप-पुण्य, अच्छी-बुरी आदि दृष्टि से भी देखा गया है। पाप-पुण्य संबंधी सामान्यत: यह धारणा है, जो व्यक्ति सत्कर्म करता है। वह इहलोक तथा परलोक में सुख प्राप्त करता है एवं जो व्यक्ति दुष्कर्म करता है वह कष्ट प्राप्त करता है। संसार में पाप की एक परिभाषा नहीं हो सकी और न हो सकती है। ''संसार में पाप कुछ भी नहीं है, वह केवल मनुष्य के दृष्टिकोण की विषमता का दुसरा नाम हैं।''[10] अज्ञानी, अनपढ ग्रामीण लोगों का किसी एक देवता पर विश्वास नहीं होता बल्कि विपत्ति को टालने के लिए वे सभी देवी-देवताओं को एक साथ मनाने लगते है। संकुचित एवं संकिर्ण धार्मिक विश्वासों से उनकी दृष्टि परे होती है।

नागार्जुन के '**रतिनाथ की चाची**' आँचलिक उपन्यास में शुभंकरपूर ग्राम का ग्रामीण जीवन चित्रित हुआ है। गाँव में स्थित अंधविश्वासों का वर्णन नागार्जुन ने किया है। जयनाथ अपने ब्राह्मण धर्म के अनुसार प्रात: स्मरण, संध्यातर्पण, पंचदेवता, सप्तशती, विद्यापति की महेशवानी, भगवान शालीग्राम की पूजा बड़ी श्रद्धा से करता है। शुभंकरपूर और तरकुलवा गाँव में लोगों की यह श्रद्धा थी कि, ''अगर किसी से बड़ा पाप हो जाये, ब्रम्हहत्या हो जाये, अवैध मातृत्व मिले तो उसे प्रायश्चित के लिए सिमरिया घाट जाना चाहिए। धर्म के अनुसार ब्राह्मण को हल जोतना, गाडी चलाना, या गाडी पर चढना भी मना है। शुभंकरपूर के जमीनदार अपनी माँ के श्राद्ध पर प्रत्येक पंडित का आने जाने का खर्च और उपर से एक सौ एक की बिदाई देना। बाहर के इन पंडितों द्वारा इन्हें 'धर्म दिवाकर' की उपाधि प्राप्त करना।''[11] आदि से पाप-पुण्य पर विचार करते है।

नागार्जुन की रचना '**बलचनमा**' (1952) में गाँव के लोग फसल अच्छी आने पर बकरे की बली देवी के सामने देते है। इतना ही नहीं शादी जैसे पवित्र अवसर पर भी लोग बकरे की बलि देते है। यहाँ लोग अपनी अच्छी फसल आने के लिए, बारिश के लिए, बाढ न आए इसलिए मनौति के रुप में काली माई को दो बकरों की बलि देना। ब्रह्म बाबा को फूल-छत्र, पित्तरों को गाय या पिंड दान

करना, बाबा कुसेसरनाथ को घी दूध का दान करना, आरती उतारना, ब्राह्मण को दान देना, उसी तरह मुंडन-छेदन, सुन्नत सराध और चलीसा आदि धार्मिक परंपराओं को लोग जी-जान से पालते है।

'दुखमोचन' उपन्यास में समाज में प्रचलित पाप-पुण्य, प्रायश्चित आदि का वर्णन आया है। गाँव में लगी आग में मास्टर टेकनाथ का बैल आग में झुलसकर मर जानेपर गौहत्या का पाप टेकनाथ ने किया ऐसा लोग कहने लगे और उसका प्रायश्चित करने के लिए कहा। टेकनाथ को पंडित ने सत्यनारायण भगवान की पूजा करने के लिए कहा। ऐसी घटनाएँ पाप-पुण्य को स्पष्ट करती है। अशिक्षा और अज्ञान के कारण ग्रामीण लोग इसे समझ नहीं पाते ऐसा लगता है।

नागार्जुन ने **'बाबा बटेसरनाथ'** में रुपडली गाँव के अनेक धार्मिक अंधविश्वास पर प्रकाश डाला है। रुपडली गाँव के लोगों द्वारा अनेक देवी-देवताओं की उपासना करना, बरगद के पेड के निचे मिट्टी के ग्यारह लाख शिवलिंग की पूजा करना आदि को पाप-पुण्य के अंतर्गत रखा जाता है।

यहाँ स्पष्ट है कि कई अंधविश्वासों में पूरा ग्राम जीवन अटका हुआ दिखाई देता है। आज ग्रामीण जन-जीवन की स्थिति में परिवर्तन आया है। ज्यों ज्यों गाँवों में शिक्षा का प्रसार हो रहा है, ग्रामवासी शहरों के संपर्क में आ रहे हैं। नये विचारों और प्रभावों को समझने के नये तौर तरिकों से प्रभावित हो रहे है, त्यों-त्यो अंधविश्वास को त्याग रहे है। रावी शती पर दस्तक देने वाले मानवी जीवन में आज भी अंधविश्वास रहे हैं, ग्रामवासी अज्ञानी होने के कारण वे इसीके शिकार बने हैं, लेकिन आज इसमें परिवर्तन आ रहा है। गति धीमी ही सही लेकिन यह परिवर्तन उपाद्यदायी है। जब तक गाँवों में नौकरी, शिक्षा, स्वास्थ्य, मनोरंजन, प्रसार माध्यम की सुविधा उपलब्ध नहीं होगी तब तक अंधविश्वास का प्रभाव रहेगा ऐसा लगता है।

2) शोषण की समस्या :-

जातीव्यवस्था का स्थान भारतीय समाज व्यवस्था में महत्वपूर्ण है। जातिय व्यवस्था के कारण समाज की एकता खंडित हो रही है। समाज में उँच-नीच, सवर्ण-दलित आदि कई भेद हो गये।

इस सामाजिक भेदाभेद के कारण समाज का ऊपर का तबका नीचले सामाजिक तबके का शोषण करता रहा है। ''भारतीय समाज में वर्णव्यवस्था ने शक्ति और धन के आधारपर सवर्णों को इज्जत सम्मान प्रतिष्ठा के अधिकारी बनाया है। ग्रामों में तो दलित यूवतियाँ उनके पंजे में फँसकर उनके विलास की सामग्री बनती है।''[12] वर्णव्यवस्था के कारण जातिय व्यवस्था में दलितों का शोषण हो रहा है। इसमें केवल दलित ही नहीं आते, तो जिनकी आर्थिक स्थिति कमजोर है ऐसे अनेक परिवार इसमें आते है, जिससे निम्न वर्ग, मध्यम वर्ग और उच्च वर्ग की निर्मिती होती है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था का प्रधान आधार कृषि और तत्संबंधी छोटे-मोटे उद्योग धंदे है। लेकिन ''भारतीय कृषक समाज जमींदार और उसके पटवारी कानूनगो, कारिन्दा, मूखिया, सरकार और उसके चौकीदार, दारोगा, कर्मचारी, पुरोहित, महन्त और महाजन तथा साहुकार सबकी सहकारी खेती है, नरमचारा है। सबकी आपस में मिली भगत है और उनकी एक सुसंगठित सुनियोजित व्यूह रचना है।''[13] यहाँ स्पष्ट है ग्रामीण कृषक समाज का सुनियोजित रुप में शोषण हो रहा है। पारसनाथजी के मत से ही भारतीय कृषक समाज की स्थिति यथार्थ रुप से स्पष्ट होती है। स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यासों में भी इसकी स्पष्ट अभिव्यक्ति हुई है। रुढी, परंपरा, अंधविश्वास, जातिव्यवस्था के साथ-साथ शोषण में ग्रामीण सामान्य कृषक पिसता जा रहा है। उनका शोषण केवल जमीनदारों के माध्यम से नहीं तो पुलिस, भ्रष्ट नेता, महाजन, साहुकार, धार्मिक व्यक्ति द्वारा हो रहा है। ग्रामीण जन-जीवन की समस्याओं के अंतर्गत उपन्यासकार ने कहाँ तक सोचा है उस पर हम प्रकाश डालेंगे।

अ) जमीनदारों द्वारा शोषण की समस्या :-

नागार्जुन ने अपने उपन्यासों में चित्रित जमीनदारी वर्ग अत्याचारी तथा सामन्ती प्रवृत्तियों को बनाये रखने की कोशिश करता हुआ दिखाई देता है। कानून से जमीनदारी प्रथापर रोक लगाई है। मगर जमीनदारों की प्रवृत्ति ऐंठन अभी भी समाज में दिखाई देती हैं। उनकी नई-नई प्रवृत्ति, शोषण की नीति, दमन चक्र के हथकंडे आदि के दर्शन उपन्यासों में होते है, जैसे मजदुरी देने से इन्कार करना, किसानों की जमीनें हडप करना, उनसे बेगारी लेना, मजदूरों-किसानों की पिटाई करना, उनकी नारियों

की अस्मत दिन दहाडे लूटना, उनपर झूठे आरोप लगाकर उन्हें जेल भेजना, उनका कत्ल करना, गंदी राजनीति का सहारा लेना, पुलिसों को अपना पक्षधर बनाकर निम्न वर्ग पर जुल्म करना आदि कई रुपों में ग्रामीण लोगों का शोषण जमीनदार आज भी कर रहे है इसका यथार्थ चित्रण इन उपन्यासों में दिखाई देता है।

नागार्जुन के '**रतिनाथ की चाची**' (1948) में कुल्ली राउत बेगार प्रथा का शिकार है। रतिनाथ उसके बारे में सोचता है - "हमारा ज़ूठन खाकर, हमारा पहिरन पहनकर उनके बच्चे पलते है। उन्हें कभी स्कूल और पाठशाला जाने का अवसर नहीं मिलता। क्या मर्द, क्या औरत इन लोगों का जीवन बडी जाति वालों की मेहरबानी पर निर्भर है।"[14] कुल्ली राउत से काम करवाने पर भी तो उसे कुछ नहीं दिया जाता, या काम के बदले बहुत थोडा दिया जाता है। इसप्रकार बेगार-प्रथा के द्‌वारा जमीनदार श्रमिकों का शोषण करते रहते है। तो शुभंकरपूर के जमीनदार दुर्गानिंदसिंह जो किसानों के साथ लेन-देन का कारोबार करते है, आसपास की पाँच कोस जमीन पर उनकी छत्र छाया है और उपर से ब्याज की कमाई, ब्याज के दर प्रतिमास डेढ़ रुपया सैकडा थी। राजा बहादुर पुराने अँगुठे को साल-साल नया करवाते जाते, सूद भी मूल बनती जाती। चक्रवृद्‌धि का क्रम राजा बहादुर की शरीर वृद्‌धि के लिए उन्हें चहबच्चा बनना पडा था।

नागार्जुन के '**बलचनमा**' (1952) का नायक खुद बलचनमा इस जमीनदारी शोषण का शिकार था। मलिकाइन द्‌वारा बलचनमा को अपने पुत्र को रुलाने के आरोप में गालियाँ देना, भैंस की घास लेकर घर देर से पहुँचने पर क्रोधवश झाडू से पीटना, सडी हुई चीजें खाने को देना, न खाने पर खाना बंद करना, माँ को दिये गये बारह रुपये का सूद लेते रहना, माँ की चापलूसी करके उसकी जमीन आम के लिए बिना रसीद से लेना। मालकिन की नौकरानी तक का उसे कोठिया कहकर पुकारना तथा व्यर्थ काम बताते रहना, मालकिन का चढ़े दामों पर धान बेचना, ब्राह्मणी और करीमबख्श को देते समय छोटे तथा लेते समय बड़े बाट से धान तोलना, रातभर मालिक द्‌वारा बलचनमा से अपना शरीर दबवाना, उसे सोने न देना, मृत्यु के समय दादी की इच्छा पूर्ति के लिए बलचनमा को मछली ले जाने पर बलचनमा की पीछ दागना। इसी तरह बलचनमा पर कई जुल्म होते रहते है। बलचनमा के पिता को एक

साधारण अपराध (बाग से आम तोड लेने) के कारण पाशविक अत्याचारों का सामना करना पडता है। बलचनमा इसका वर्णन करते हुओ कहता है - ''मालिक के दरवाजे पर मेरे बाप को एक खंभेली की हरी कैली निशान उभर आये हैं --- चेहरा काला पड गया है होठ सुख रहे हैं अलग कुछ दूर पर छोटी चौकी पर यमराज की भाँति मझले मालिक बैठे हुओ है।''[15] इसीतरह उपन्यासकार ने प्रारंभ से ही जमीनदारों के नृशंस कार्यो एवं उनके द्वारा किये गये शोषण का चित्रण किया है। जब जमीनदार के कारिंदे बलचनमा के पिता लालचंद को बाँधकर मार रहे है तो उसकी माँ मालिक के सामने गिडगिडा रही है, पुत्र और पुत्री भयातुर रहती है। कुछ दिनों बाद बलचनमा के पिता की ज्वर से मृत्यु होती है। बलचनमा को मालिक के पास भैंस चराने का काम मिलता है। बलचनमा के पिता के मरने के बाद मँझला मालिक बलचनमा की माँ को बारह रुपये कर्ज देकर सारे कागज पर अंगुठे का निशान लगवा लेता है। पैसे देते-देते उसका सूद भी पूरा नहीं हो पाता। मूल तो ज्यों का त्यों रहता है। मँझले मालिक बलचनमा का खेत लेता है। इसप्रकार की क्रूरता, शोषण एवं हथकंडे जमीनदारों के लिए आम बात है और इन्हीं के बल पर वे अपने शोषण के साम्राज्य का विस्तार करते रहते है। जमीनदार केवल बलचनमा पर जुल्म करके संतुष्ट नहीं हुए तो उसकी छोटी बहन के साथ जबरदस्ती करने का प्रयत्न करते है। इसी तरह ये बड़े जमीनदार लोग केवल कृषकों के जीवन से ही नहीं तो उनके अस्मत से भी खेलते रहे है। सिर्फ जमीनदार के चंगुन में किसान वर्ग फँसा था ऐसा नहीं तो किसान महाजन वर्ग के चंगुल में इतना जकड जाता था कि मरने के बाद ही उसे ऋण से मुक्ति मिलती थी। बलचनमा इसके बारे में कहता है - ''कर्ज और गुलामी में सिर से पैर तक डूबा हुआ यह आदमी मलेरिया की हड्डी तोड बीमारी से गल-पचकर जब मरा तभी छुटकारा पा सका।''[16] इसीतरह गरीब किसान जमीनदार, महाजन के हाथों में पकडकर पूरी तरह टूट चुके थे। ऋण से मुक्ति न होने के कारण धीरे-धीरे जमीन भी कृषकों के हाथो से निकलने लगी। गरीबी ने किसान जीवन पूरी तरह जकड लिया। इस बारे में बलचनमा के विचार बडे मार्मिक लगते है - गरीबी नरक है भैया नरक चावल के चार दाने छीटकर बहेलिया जैसे चिडियों को फॅसाता है उसी तरह ये दौलतवाले गरजमंद औरतों को फाँसा मारते है। किसान हमेशा पिछडे रहे है क्योंकि पूँजीपति वर्ग निरंतर किसान का शोषण करता रहा है और नारी का शोषण भी करता आ रहा है।

'बाबा बटेसरनाथ' (1954) में नागार्जुनजी ने वटवृक्ष के माध्यम से पीढियों-दर-पीढ़ियों में जमीनदारों द्वारा निर्धन जनता पर किये गये अत्याचार एवं शोषण की कथा प्रस्तुत की है। सौ वर्ष पूर्व पंडित चंद्रमणि के दुश्चरित्र घेवते बलिभद्दर से कैफियत तलब करने पर राजा बहादुर के सिपाहियों ने जीवनाथ के दादा शत्रुमर्दनराय को लाल चीटों के छत्ते से कटवाकर कोडे लगवाये थे। बाद में जमीनदारी उन्मूलन के प्रारंभ होने पर जमीनदार सार्वजनिक उपयोग की भूमियों को धीरे धीरे बेच देते है। लोभी किसान टुनाई पाठक और जैनरायन झा ने राज बहादुर से बरगदवाली भूमि और पोखर की बंदोबस्ती ले ली थी। वह बरगद कटवाना चाहते थे। दरभंगा के महाराजा, दरबारियों और अफसरों को सौगत स्वरुप फल भेजने की अपेक्षा बेचकर लाभ कमाने लगे। इनके बारे में बाबा बटेसरनाथ कहते है, ''जाते-जाते भी ये राजा, जमीनदार, भूस्वामी, सामंत चाँदी काट रहे है। घोडे की कीमत पर वे हाथी हटा रहे है, बछडे की किंमत पर घोडा और बछडा।''[17] डेढ़ सौ रुपये के लोभ में पाठक गुंगे चमार की हत्या करवाकर जैकिसुन झा, जीवनाथ राय, लछमनसिंह, सुरती झा, सरगुज महतो पर इल्जाम लगाते है। निम्न जाति के लोगों पर जमीनदार अनेक तरह के जुल्म करते थे। इस बारे में बाबा बटेसरनाथ जैकिसुन को कहते है - ''छोटी औकात के और नीची जात के लोगों को तो खैर वह कीडे-मकोडे समझता ही था, अच्छी अच्छी हैसियत के भले खासे व्यक्तियों से वक्त, बेवक्त, नाक रगडवाता था जमीनदार।''[18] इसप्रकार तरह-तरह के जुल्म करके जमीनदार अपना मुनाफा देख रहे थे। जमीन हडपना, चमार की हत्या करना, धन शक्ति का गलत उपयोग करना, गरीबों को जेल भेजना आदि कई शोषण के हथकंडे अपनाये जाते थे।

नागार्जुन के **'दुखमोचन'** (1957) में किसानों एवं मजदुरोंपर जमीनदारोंने शोषण का वर्णन किया है। टमकाकोइली ग्राम में नित्याबाबू नामक जमीनदार थे। उन्होंने दुखमोचन से कहा की गाँव में आने वाले गेहूँ आधे अपने पास और आधे मुझे दे दो, वह अपनी बेटी की शादी के लिए वह मुक्त में गेहूँ चाहता था। लेकिन दुखमोचन ने ऐसा नहीं किया तो नित्याबाबू ने गाँव में अफवाह फैला दी। पहली अफवाह यह थी कि गेहूँ मशीन से निचोड गये है और वह गेहूँ नहीं गेहूँ की सीठी है। दुसरी

अफवाह यह थी कि जो यह गेहूँ लेगा उसे कोसी नदी के किनारे ले जाकर अफसर लोग महिनो बिना मजदुरी के काम लेगें। और तिसरी अफवाह यह है कि अगले साल सरकार चार गुणा ज्यादा अनाज वसूल कर लेगी। इसी तरह अफवाह फैलाकर गाँव के लोगों को गेहूँ लेने के लिए इन्कार करवाना और गेहूँ खुद के लिए ले लेना यह उसकी स्वार्थी नीति थी। और इसीतरह नित्याबाबू जैसे लोग अपनी स्वार्थ पूर्ति के लिए कोई भी तरिका अपनाकर शोषण करते थे। नित्याबाबू अमीर होते हुअे भी गलत रास्ता अपनाकर गाँव के मजदुर और किसानों के गेहूँ के लिए उन्हें फँसाना यही उसकी नीति यहाँ स्पष्ट होती है।

इसप्रकार यहाँ स्पष्ट होता है कि नागार्जुन के उपन्यासों में तत्कालीन समाज व्यवस्था, जमीनदारों द्वारा शोषण, महाजनों द्वारा शोषण की व्यथा-कथा उनके अमानवीय अत्याचारों के यथार्थ दर्शन होते है। गाँव में किसानों की जमीने हडप करना, सूद के बदले उनसे बेगारी लेना, तथा उनपर मनचाहे अत्याचार करना, कर्ज वापस न मिलनेपर किसानों की पीटाई करना, किसानों की औरतों का शारीरिक शोषण करना, झूठे इल्जाम लगाकर किसानों को जेल भेजना, उनकी फसल नष्ट करना तथा किसानों पर हमेशा दबाव रखना आदि विविध आयामों के माध्यम से जमीनदार, महाजन गरीब किसानों एवं मजदुरों का शोषण करते थे। यह यहाँ लक्षित होता है। किसानों के अज्ञान, अर्थाभाव और अशिक्षा का फायदा उठाकर ही यह शोषण चक्र निरंतर जारी रहा है। आज इसमें काफी बदलाव आया है। लोग शिक्षित हो रहे है, अन्याय के खिलाफ आवाज उठा रहे है, शैक्षिक प्रगति और प्रगतिवादी विचार धाराने इन लोगों में विद्रोह की भावना का निर्माण किया है। आलोच्य उपन्यासों के माध्यम से यह स्पष्ट होता है। शिक्षा, नौकरी, कर्ज सुविधा प्राप्त होगी तो यह शोषण का दमन कम होगा ऐसा लगता है।

ब) पुलिस द्वारा शोषण की समस्या :-

भारत के राजनीति के नियामक तत्व में सरकार और राजनीतिक दल महत्त्वपूर्ण तत्व लक्षित होते है। सरकार अपनी व्यवस्था में पुलिस की सहायता लेती है। शांति, सुरक्षा, बंधुता आदि कई कार्यों में पुलिस सरकार की मदद करती है। सामान्य जनता की रक्षा करना, आपत्ति में उनकी

सहायता करना, समाज में शांति स्थापित करना आदि कई प्रकार के कार्य करनेवाली यह व्यवस्था ग्रामीण जन-जीवन के शोषण का आयाम बनी है। अज्ञानी, अशिक्षित ग्रामीण लोगों का पूलिसद्‌वारा किस रुप में शोषण होता है इसका चित्रण नागार्जुन के उपन्यासों में हुआ है। जमींनदार और पुलिस की दोस्ती होना, राजनीतिक नेता और पुलिसों की साँठ-गाँठ होना, समाज विघातक ताकदों से पुलिसों की मिली-भगत होना, धार्मिक व्यक्ति के साथ पुलिसों की दोस्ती होना आदि के कारण सामान्य जनता का पूलिसद्‌वारा शोषण हो रहा है।

नागार्जुन के '**बलचनमा**' उपन्यास में सिर्फ पुलिसों जमीनदार के साथ दोस्ती और राजनीतिक नेताओं के साथ दोस्ती का थोडा बहौत चित्रण आया है। लेकिन नागार्जुन ने अपना उपन्यास 'बाबा बटेसरनाथ' में पुलिसों के शोषण का विस्तृत चित्रण किया है।

'**बाबा बटेसरनाथ**' (1954) में जमीनदारों और पुलिसों की मिली भगत से सामान्य व्यक्ति का शोषण होता रहता है। रुपडली के जमीनदार पाठक और जैनरायण एक गूंगे चमार की हत्या करते है और सारा इल्जाम जीवनाथ, सरजुग महतो, जैकिसन, लछमनसिंह और सुरती झा पर थोंपा जाता है। हत्या के अभियोग में इन पाँचों को गिरफ्तार किया जाता है। इसी तरह पुलिस और जमीनदारों का बडा मेल-जोल था। जेल के छूटने के बाद इन पाँचों ने बडे जोश से ग्राम-विकास का कार्य शुरु किया। गाँव के लोग पाठक और जैनरायण का द्वेष करने लगे, इनसे भयभीत होकर पाठक ने अपने घर के सामने पुलिस के दो जवानों को खडा किया। पुलिस की हिफाजत में पाठक डेढ-दो महिने तक था। गाँव के लडके खुले आम यही गीत गाते,

> ''पाइक टुनाइयाँ, पाठक टुनाइयाँ
> पुलिस तोहर नानी, दारोगा तो रसाइयाँ;
> पाठक टुनियाँ ।''[19]

इस गीत से ही स्पष्ट होता है कि जमीनदारों की पुलिस के साथ गहरी रिश्तेदारी थी। और इसीके बल पर जमीनदार, गरीब किसानों, मजदूरों का मनचाहा शोषण करते है।

इससे यह स्पष्ट होता है कि जमीनदारों और पुलिसों द्‌वारा सामान्य व्यक्ति का दोहरा शोषण हो रहा है। जमीनदार अपने फायदे के लिए पुलिसों को हाथ में लेकर मनचाहा जुल्म किसानों पर कर रहे हैं, झूठे आरोप लगाकर उनको जेल भेझ देते है। धीरे-धीरे गाँव में नई चेतना का उदय हो गया है। लोग पढ-लिखकर शिक्षित बन गये है लेकिन फिर भी पुलिसों की भ्रष्टाचारी प्रवृत्ति के कारण आज भी सामान्य जन पीडित है। आज भी उन्हें न्याय मिलना मुश्किल लगता है। सामान्य लोग साधारणत: पुलिस की झंझट से दूर रहना पसंद करते है। पुलिस ग्रामव्यवस्था में रक्षक के रुप में कार्य करती है, मगर रक्षक ही भक्षक बन जाये तो न्याय कौन देगा? यही प्रश्न है। पुलिस जमीनदार, राजनीतिक नेताओं का दाता-काठी-रोटी जैसा संबंध रहा है। यहाँ स्पष्ट है अज्ञानी ग्रामवासियों के शोषण का यह रुप पुलिस शोषण लगता है।

क) अंग्रेजों द्‌वारा शोषण की समस्या :-

अंग्रजों के शासन से पूर्व भारतीय ग्राम एक सुशासन - प्राप्त - आत्म - निर्भर इकाई था। गाँव की पंचायत ही उसकी नगरपालिका, प्रबंधकारिणी - समिति और सामाजिक सुरक्षा प्रदान करनेवाली सत्ता थी। फिर अंग्रेजों ने भारत पर अपना साम्राज्य बनाया। अंग्रेज अफसर ग्रामीण लोगों का शोषण करने लगे। अंग्रेजों ने भूमिपर लगान बढ़ाकर किसानों को फसल बेचने के लिए बाध्य किया। इससे ग्रामीण अर्थव्यवस्था का ढाँचा गिर गया। साथ ही कुटीर उद्योगों का न्हास हो गया। बढ़ती हुई आबादी, कुटीर उद्योगों का न्हास, गिरता हुआ आर्थिक ढाँचा आदि के कारण किसान की आर्थिक दशा दिन-प्रतिदिन शोचनिय होने लगी। उनका शोषण होने लगा, उन पर अत्याचार होने लगे और इन सब का यथार्थ चित्रण हिंदी उपन्यास में दिखाई देता है। आलोच्य उपन्यासों में इसका अध्ययन इस प्रकार किया गया है।

नागार्जुन के '**बलचनमा**' (1952) उपन्यास में अंग्रेजो के शोषण का थोडा ही वर्णन आया है। बलचनमा फुलबाबू के साथ पटना चला जाता है। फूल बाबू के यहाँ बलचनमा को घरेलू काम करना पडता था। फूल बाबू वहाँ पढाई कर रहे थे। लेकिन धीरे-धीरे पढाई छोडकर वह अंग्रेजों के

खिलाफ नमक बनाने का कार्य करने लगे। नमक बनाने के कार्य में वह पकडे जाते है और उन्हें दो महिने की कैद की सजा होती है। इसी तरह अंग्रजों द्वारा लोगों का शोषण हो रहा था।

नागार्जुन के **'नई पौध'** उपन्यास में भी अंग्रेजों के शोषण का वर्णन आया है। अंग्रेजों के खिलाफ स्वतंत्रता आंदोलन में नीलकंठ मल्लिक नमक बनाकर जेल गया था। साल भर की सजा हो गई थी। ''दिगंबर का पिता नीलकंठ मल्लिक बिहार बैंक (पटना) में असिस्टेंट एकाउंटेट था। कुल जमा 210 मिलते थे उसे 130'32 के राष्ट्रीय आंदोलन में हाइस्कूल की मास्टरी छोडकर और नमक बनाकर नीलकंठ बाबू जेल गये, साल भर की सजा हुई थी।''[20] इससे स्पष्ट है कि लोगों ने राष्ट्रीय आंदोलन में अपनी आजीविका भी लात मारकर भगा दिया। नागार्जुन ने सविनय अवज्ञा आंदोलन की चर्चा की है और अंग्रेजों के शोषण का चित्रण किया है।

नागार्जुन का **'बाबा बटेसरनाथ'** (1954) केवल मात्र ऐसा उपन्यास है जिसमें अंग्रेजों की साम्राज्यवादी शोषण नीतियों एवं उनके द्वारा ढ़ाए जुल्मों का चित्रण हुआ है। समय की दृष्टि से भी यह उपन्यास ही उनका एक मात्र ऐसा उपन्यास है, जो एक लंबे कालखंड को समेटता है और अंग्रेजी उपनिवेशवाद की शोषण की कथा कहता है।[21] 'बाबा बटेसरनाथ' में नागार्जुन ने एक वटवृक्ष द्वारा रुपडली गाँव की सारी कहानी बताई है। अंग्रेजों के शोषण के बारे में बाबा बटेसरनाथ कहते है - ''यहाँ से कोस-भर पूरब पर एक साहब आकर बस गया। क्या शानदार कोठी बनवाई थी उसने ! महाराज बहादुर से दो सौ एकड़ जमीन सौ साल के पट्टे पर नील की खेती के लिए उसको मिली थी --- शहर हो चाहे देहात, व्यापार-वाणिज्य का क्षेत्र हो चाहे किसानी जमीनदारी का, जल-कलक्ट र हो या सेक्रेटियर, हरजगह गोरी चमड़ीवालें की तूती बोलती थी। कानून और हुकूमत उनके बूटों की कीलों के नीचे थे।''[22] रुपडली गाँव में अंग्रेज जमाने में अंग्रेजी पढा-लिखा एक भी नहीं था। किसानों के उपर एक तरफ से जमीनदारों का दबदबा था। तो दुसरी तरफ नील के कारखानेदार अंग्रेज जमे बैठे थे। सभी जगह अंग्रेजों ने अपना अधिकार जमाया था। इस अंग्रेजी रियासत का व्यंग्य के साथ उल्लेख करके बाबा बटेसरनाथ कहते है, ''वह महारानी विक्टोरिया का जमाना था, जिले का कलक्टर गोरा था, पुलिस

सुपरिंटेंडेंट गोरा था। सब डिविजनल अफसर गोरे थे। अदालत का बडा हाकिम गोरा था। उपर बडा लाट और छोटा लाट सब गोरे साहबा'' इन गोरे साहब और जमीनदारों के बीच देहाती जनता के दु:ख दर्द की आवाज नीचे-ही-नीचे दबती रहती थी। देहात के प्राकृतिक आपत्तियों में लोग मर रहे थे, और अंग्रेजो ने देहात की ओर ध्यान देने की अपेक्षा रेल-पथ का निर्माण आरंभ किया। जैकिसुन के दादा अधिकभाई को जॉन साहब ने केवल इसलिए पिटा था कि वह सलाम करने चूक गया था। सलाम कहाँ से करते एक हाथ में तेल का बर्तन था, माथे पर अरहर का गठ्ठा आदि के कारण वे सलाम नहीं कर सके, लेकिन दूसरे ही दिन उनके पीठ पर हंटरों की बौछार पडी। जिंदगीभर ये निशान उनके पीठ पर बने रहे। इसीतरह अंग्रेजों ने अपने जमाने में किसानों का, मजदूरों का बहुत शोषण किया। कभी उनकी पिटाई की तो कभी बिना वजह रकम लेली। तो कभी जेल भेज दिया।

इसीतरह अंग्रेजोंद्वारा होने वाले शोषण में सामान्य जनता पूरी तरह पिस चूकी थी। अंग्रेजों ने लगान बढ़ाकर ग्रामीण अर्थव्यवस्था का ढाँचा बिगाड दिया था। कुटीर उद्योगों के बंद हो जाने से सामान्य लोगों की रोजी-रोटी छीन ली। साथ-ही-साथ अंग्रेजों के अत्याचार सहनेवाला यह वर्ग हमेशा के लिए नीचे दबता गया। किसानों की पिटाई करना, झूठे जुल्म में उन्हें जेल भेजना, जमीनदारों से दोस्ती करके मन चाहे अत्याचार करना आदि कई प्रकार से अंग्रेज जनता का शोषण कर रहे थे। अंग्रेजों द्वारा शोषण की समस्या इस तरह नागार्जुन ने अपने उपन्यासों में चित्रित की है। बाबुराम गुप्त के मतानुसार - ''नागार्जुन का संवेदनशील कथाकार देश की आर्थिक विपन्नता और निरंतर शोषण के शिकार किसान व मजदूर के दूर्दशा से सुपरिचित था। अंग्रेज शासकों और जमीनदारों के आबाध शोषण व अत्याचारों ने उसे भीतर तक झकझोर दिया।''[23] यह कथन यहाँ यथार्थ लगता है।

ड) धार्मिक व्यक्ति द्वारा शोषण :-

भारतीय समाज जीवन में धर्म का विशिष्ट स्थान रहा है। धर्म और जन-जीवन का अन्योन्याश्रित संबंध है। धर्म मानवी जीवन को नियंत्रित रखनेवाली एक संस्था है। तो मानवी जीवन धर्म को विकसित करनेवाली व्यवस्था है। धर्म नैतिक-अनैतिक, सत्य-असत्य, पाप-पुण्य को स्पष्ट

करनेवाली संकल्पना है। धर्म के कारण देवी-देवता के साथ-ही-साथ ब्राह्मण, पंडित, पुरोहित, ओझा आदि धार्मिक क्षेत्र में कार्य करनेवाले धार्मिक व्यक्तियों को भी महत्वपूर्ण स्थान समाज में प्राप्त हुआ। प्राचीन काल से आज तक धर्म के नाम पर दान देना, दक्षिणा पाना, बलि देना, ग्रह शांति के पर धन कमाना, अशिक्षा के नामपर कुकर्म करना, अनैतिकता को बढ़ावा देना, मठो-विहारों को अपवित्र करना आदि कई रुपों से धार्मिक व्यक्ति समाज का शोषण कर रहे हैं। आलोच्य उपन्यासों के आधार पर ग्रामीण जन-जीवन में धार्मिक व्यक्तियों द्वारा होने वाला शोषण हम देखेंगे।

नागार्जुन के '**रतिनाथ की चाची**' (1948) में शुभंकरपूर के लोग बडे धार्मिक और श्रद्धालू है। पूनर्जन्म और परलोकवाद की भावना पर विश्वास रखते है। वे अपनी दूरवस्था का कारण अपने भाग्य को मानते है। उनकी धारणा है, छोटे-बडे भगवान के घर से बनकर आते है। धर्म समृद्ध लोगों की यश कीर्ति और अस्तित्व को बनाये रखने के लिए समाज से हमेशा सहयोग देता रहा है, तो निर्बल, अक्षम और हीन किसान धर्म के कठोर अनुशासन में पिस-पिसकर सदा अन्याय और अत्याचार के अभिशाप को सहते हुए अपनी असहाय स्थिति में पडे रहने के लिए विवश होते है। समाज से सबल, सक्षम और समृद्ध लोगों पर धर्म का कोई प्रभाव नहीं पडता तथा वे जो करते हैं उसे धर्म सही नहीं मानता है। इसको नागार्जुन ने बडे मार्मिक शब्दों में स्पष्ट किया है - ''समाज उन्हीं को दबाता है, जो गरीब होते है। शास्त्रकारों को बलि के लिए बकरे ही नजर आये। बाघ और भालू का बलिदान किसी को न सूझा। बड़े-बड़े दाँत और खूनी पंजे पंडितों के सामने थे, इसलिए उधर से नजर फेरकर उन्होंने बेचारे बकरों का फतवा दे डाला।''[24] धार्मिक पाखंडी और अंधविश्वासी पंडितजी में दिखाई देता है। संस्कृत पाठशाला के पंडितजी को राजा बहादुर से धन की प्राप्ति होती है। इसलिए नित्य ही पाठ के आदि मध्य या अंत में पंडितजी राजा बहादुर का गुणगान कर उनकी श्री-समृद्धि की अमरता की कामना करना अपना परम कर्तव्य समझते हैं। तो समाज के शोषक वर्ग के प्रतिनिधी दुर्गानंदसिंह अपनी माँ के श्राद्ध के अवसरपर महामहोपाध्यायधारी सभी पंडितों को बुलाकर एवं उन्हे एक सौ रुपये की दक्षणा और आने-जाने का सेकंड क्लास का खर्चा देकर 'धर्म दिवाकर' की उपाधि प्राप्त करते है। जयदेव मिश्र के

लडकों के विवाह के संबंध में जब गाँव में धर्म के नामपर विरोध होता है, तो वे भोला पंडित को एक जोडा, महीन धोती और चाँदी के सौ रुपये देकर सारा मामला ठिक कर देते है। जयनाथ कार ताराबाबा पर पूरा विश्वास और श्रद्‌धा है। इसीकारण वह ताराबाबा का प्रसाद समझकर हररोज भाँग पीता है। ताराबाबा के कहने पर गर्भ गिराने का यंत्र तैयार करता है। ताराबाबा के बारे में जो गाँव में किवन्दितियाँ प्रसिद्‌ध हुई है उसे सारा गाँव सच मानता है। शुभंकरपूर के नजदीक परसौनी गाँव में कटोरा चलानेवाले जुगल कामति को सारे गाँव के बडे लोग तो डरते ही है लेकिन बच्चों में डर पैदा करनेवाले भी वह है। इसीतरह धार्मिक व्यक्ति सामान्य जनता को अपने पँजे में अटकाकर उन्हें फँसा रहे थे, उनका शोषण कर रहे थे।

नागार्जून की दूसरी रचना **'बलचनमा'** (1952) में बलचनमा की मालकिन सुखिया पर भूत सवार होने पर दामो ठाकुर को बुलाया जाता है। दामो ठाकुर झाड-फूँक, पूजा-पाठ, टोना-टापर सब कुछ जानते है। सुखिया पर भूत सवार होने पर झाड-फूँक द्‌वारा वे घर की सारी किवाडे बंद करके केवल सुखिया को अंदर लेकर उसका भूत उतार देते। बलचमना कहता है - भूत या प्रेत अक्सर बाँझ औरतों को ही पकडता है। स्पष्ट है सुखिया की दमित अतृप्त वासना जब उद्‌दिप्त होती है तो उनकी तृप्ति के लिए ही यह ढोंग रचा जाता। इसतरह भूत-प्रेतों को शांत करने के बहाने ओझा व्यभिचार में लिन होते है। नारी का शोषण करते है।

नागार्जुन के **'नई पौध'** (1963) में धार्मिक शोषण की समस्या का चित्रण मिलता है। आसिन के महिने में पितर पच्छ के दिन आये थे। मातृनवमी के दिन अपनी-अपनी नानी, सास, दादी और परदादी के निमित्त सबको एक-एक ब्राह्मण लगता था। पंडिताइन ने अपनी नानी, सास और सौतेली सास के लिए चार ब्राह्मण को न्यौता दिया था। उन ब्राह्मणों के लिए भोज्य वस्तुएँ काफी और अच्छी अपेक्षित होती है। बर्खी के अवसरपर सात या पाँच ब्राह्मणों को बुलाया जाता है। ब्राह्मणों की संख्या थोडी रहे, मगर सामग्री अच्छी होनी चाहिए, इसी तरह धर्म के नाम पर पंडित जैसे धार्मिक व्यक्ति गाँव के लोगों को ठगाते थे। उनके अज्ञान का लाभ उठाकर उनका शोषण करते थे, ये यहाँ स्पष्ट होता है।

नागार्जुन ने '**बाबा बटेसरनाथ**' (1954) में रुपडली गाँव में ब्रह्मबाबा की स्थापना करना, इच्छापूर्ति के लिए मनौतियाँ मनाना, देवी-देवता के सामने बलि देने के लिए लोगों को उत्साहित करना, ओझा द्वारा भूत पिशाच्च निकालने के लिए दक्षिणा लेना, कंकाली माई के लिए बकरा और शराब की माँग करना आदि कई रुपों में अज्ञानी ग्रामवासियों का शोषण हो रहा है। देवता के लिए शराब की माँग करके धार्मिक व्यक्ति अपनी विकृति ही प्रकट करते है। इस पर भी उपन्यासकारने प्रकाश डाला है।

नागार्जुन के '**दु:खमोचन**' उपन्यास में भी धार्मिक अंधविश्वास की समस्या का चित्रण किया है। मास्टर टेकनाथ का बैल गाँव में लगी आग में झूलसकर मर जाता है, तब गाँव के लोग उसे बैल की हत्या का पापी मानते है और उसे प्रायश्चित करने को कहते है। पंडित उसे सत्यनारायण भगवान की पूजा करने को कहते है और पुरोहित उसे ही कहे। पंडित - "दुखमोचन की पीठ पर हाथ रखकर बोले - टेकनाथ से कह देना, हत्यावाली बात अपने मन से निकाल डाले और ठाठ से सत्यनारायण भगवान की पूजा करे, पुरोहिताई बल्कि मुझसे ही करवाए ---।"[25] इसीतरह पंडित अपने स्वार्थ के लिए लोगों को फँसाकर शोषण करते है।

इससे यही कहा जा सकता है कि ग्रामीण जन अशिक्षित अज्ञानी होने के कारण कोई भी उन्हें ठगा सकता है। एक तरह यह उनका होने वाला शोषण ही है। लेकिन ग्रामीण जन भोले-भाले होने के कारण इसको समझ नहीं पाते और बीमारी में अपना दु:ख दूर करने के लिए हमेशा ऐसे धार्मिक व्यक्ति का सहारा लेते है। यह धार्मिक व्यक्ति धर्म के नाम पर अनेक प्रकार की विसंगतियों के पिछे हुए असली रुप को देख नहीं पाती और आँखे बंद करके उनपर विश्वास कर लेती है। धीरे-धीरे परिस्थिति बदल रही है। नई शिक्षा, नए विचार, विज्ञान की सहायता से लोगों में जन-जागृति का प्रयास किया जा रहा है। आज भी कुंडली, भविष्य, ग्रह - नक्षत्र आदि पर लोग विश्वास करते है। इसी विश्वास का धार्मिक लोग आज भी फायदा ले रहे है। लोगों को ठगाने का काम कर रहे है। अत: धर्म और धार्मिक व्यक्ति अपने फायदे के लिए अपनी दृष्टि से धर्म का अर्थ बता रहे है। इसीकारण शोषण का एक आयाम बना है।

निष्कर्ष :-

इससे यही कहा जा सकता है कि ग्रामीण जन-जीवन में अज्ञान-अशिक्षा की मात्रा अधिक होने के कारण उनका हर प्रकार से शोषण हो रहा है। महाजन, ब्राह्मण, जमीनदार, पुरोहित, महंत, ओझा द्‌वारा होने वाला शोषण अब धीरे-धीरे कम होता जा रहा है। स्वातंत्र्यपूर्व काल की पृष्ठभूमि पर आधारित उपन्यासों में होने वाला शोषण अब नहीं रहा है। कम सूद पर कर्ज उपलब्ध करके सरकार उनका सूदखोरों के माध्यम से होने वाला शोषण रोक रही है। कानूनी सुधार तथा शिक्षा विषयक सरकार की उदारनीति के कारण ग्रामीण जन-जीवन में चेतना प्रवृत्ति उभर रही है। पुलिस अज्ञानी और भोले-भाले ग्रामीण लोगों का शोषण कर रही है। पुलिस का राजनीतिक नेताओं से, जमीनदारों के साथ संबंध होने के कारण सामान्य किसानों, मजदूरों का शोषण हो रहा है। साथ ही साथ गाँव के लोग अंधश्रद्‌धा और धार्मिक होने के कारण पंडित, ओझा, ठाकुर द्‌वारा उनका शोषण हो रहा है। मगर आज अंधश्रद्‌धा निर्मुलन समिति, सेवाभावी संस्था आदि के कारण इस शोषण की मात्रा कम हो गयी है। जमीनदारी उन्मुलन, वेठबिगारी प्रथा का निर्मुलन, सूदखोरी का कानूनन प्रतिबंध आदि के कारण शोषण कम हो रहा है। ग्रामीणों का होने वाला यह विविध आयामी शोषण उनके जीवन के शोषण की कथा ही है। आज सरकार की उदारनीति, सेवाभावी व्यक्तियों और संस्थाओं का कार्य विकास मंडलों की स्थापना, सरकारी अफसरों का वहाँ पहुँचना आदि के कारण शोषण की मात्रा कम होने की संभावना है।

ड) नारी शोषण की समस्या :-

नारी समाज व्यवस्था का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। नारी के विविध रुपों की व्याख्या की है मगर आज उसका दुर्गा की अपेक्षा 'अबला' का रुप अधिक मात्रा में उभर उठा है। युगों-युगों से पीडित, अत्याचार-अनाचार की शिकार एवं वासना तृप्ति का साधन बनकर जीवन व्यतीत करने वाली नारी बेबस, लाचार एवं अपमानीत जिंदगी जी रही है। पाश्चात्य सभ्यता का आक्रमण, आर्थिकता का अभाव, अशिक्षा, धर्म का बुरा प्रभाव, रुढी-परंपरा आदि कई कारणों से ग्रामीण नारी का जीवन

समस्याओं से घिरा हुआ है। आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक समस्याओं में अटकी नारी का विविध रुपों में शोषण होता है। ग्रामीण नारी या भारतीय नारी का विविध रुपों में होनेवाले शोषण को इस प्रकार देखा जा सकता है :-

अ) नारी का स्वरुप

1) शोषित नारी।
2) बलत्कारीत नारी।
3) भोग्यनारी ।
4) रखैल नारी।
5) वेश्या नारी।
6) जागृत नारी।
7) परितकत्या नारी ।

ब) ग्रामीण नारी की समस्याएँ

विधवा जीवन।	विवाह विषयक।
1) अवैध मातृत्व।	1) बाल विवाह।
2) अशिक्षा ।	2) बहुविवाह ।
3) आत्महत्या।	3) अनमेल विवाह।
4) अवैध संबंध।	4) परित्यक्त्या।
5) अवैध मातृत्व।	5) दहेज।

क) शोषण के विविध रुप

1) जमीनदारो द्वारा।
2) पुलिस द्वारा।
3) सरकारी अफसरों द्वारा।
4) परिवार द्वारा ।
5) धार्मिक व्यक्ति द्ववारा।
6) रुढी प्रथा द्वारा।
7) समाज द्वारा।

ड) नारी के अन्य रुप

1) पढी लिखी नारी।
2) आदर्श पत्नी ।
3) माँ।
4) बहन।

ई) ग्रामीण नारी का पारिवारिक संबंध

1) पति-पत्नी संबंध।
2) टुटते-बिगडते पति-पत्नी संबंध।
3) माता-संतान संबंध।
4) माई-बहन संबंध।
5) सास-बहू संबंध।
6) भाई-बहन संबंध।
7) भाभी-ननंद संबंध।

उपर्युक्त तालिकाद्वारा भारतीय नारी के विविध रुप स्पष्ट होते है तथा होने वाला शोषण, उससे व्यथित नारी जीवन भी दिखाई देता है। नागार्जुन के उपन्यासों में नारी जीवन का सूक्ष्म

रुप से चित्रण किया है। आलोच्य उपन्यासों के आधारपर ग्रामीण जन-जीवन में नारी का रुप, शोषण के विविध रुप, स्वरुप उसकी समस्याएँ, पारिवारिक संबंध आदि के बारे में हम सोचेंगे -

नागार्जुन ने अपने उपन्यास **'रतिनाथ की चाची'** (1948) में नारी की दयनीय स्थिति के बारे में विचार किया है। 'रतिनाथ की चाची' में सामाजिक विषमता और स्वार्थपरता ने गौरी की स्थिति को बहुत दयनीय बना दिया है। मैथिल कुलीन सामंती एवं रुढीवादी ब्राह्मण वृत्ति पर जीविका चलाने वाला जयनाथ गौरी अर्थात अपनी भाभी को अपनी कामुकता का शिकार बना लेता है। और वह गर्भ धारण कर लेती है। ऐसी स्थिति में उसे अकेला छोडकर वह गाँव से भाग जाता है। शुभंकरपूर का समाज दम्मो, फूफी और रामपुरवाली चाची गौरी को समझ नहीं पाते और उसके जीवन को दुखद एवं कष्टप्राय बना देते है। गौरी अपने माँ के पास जाकर गर्भ पात करा लेती है। उसकी माँ का स्वरुप समाज में बाघिन के तरह था, इसीकारण गौरी को अपनी मानसिक पीड़ा का एहसास नहीं होता, लेकिन शुभंकरपूर वापस आने पर सारा शुभंकरपूर उसे नोंचने के लिए दौडता है। खुद उसका पुत्र उमानाथ उसके साथ दुर्व्यवहार करता है। गौरी के पति की बरसी पर समाज ब्राह्मणों को खाने के लिए न जाने देकर गौरी के प्रति अपने क्रूरतम व्यवहार का परिचय देता है। इसप्रकार सामाजिक तिरस्कार, अपमान एवं घुटन के कारण गौरी का जीवन एक दु:खद गाथा बनकर रह गया है। इस विधवा जीवन शोषण की शिकार गौरी ही नहीं तो अन्य कई स्त्रियाँ है। उनमें परसौनी गाँव की रहनेवाली सुशिला जो बालवियवा है। जयनाथ उसके प्रति भी आकर्षित होता है। सुशिला काशी मे विधवा आश्रम में रहती थी। जो सज्जन, धनी उस विधवा आश्रम को चलाते है, उसके बारे में सुशीला बताती है - ''वह धनी सज्जन विधवाओं के प्रति इतना करुणामय है कि तीन-तीन विवाहिताएँ और पाँच-पाँच रखेलियाँ रहते हुये भी चुडियों से सूनी कलाई की ओर ललचाई निगाह से देखा करता है।''[26] **'रतिनाथ की चाची'** का भोला पंडित एक ऐसा धूर्त चरित्र है, जो पचास-पचास रुपयों के लिए किशोरी बालिकाओं के जीवन से, अनमेल विवाह करवाकर खिलवाड करता है। पचीसों लडकियाँ इनके नाम पर दिन-रात आँसू बहाया करती थीं। उनकी जिंदगी कष्टप्राय हो गयी थी। भोला पंडित जैसे बिचौलिया मिथिला जनपद

के समाज में व्याप्त अशिक्षा और कुलश्रेष्ठता के आग्रह का लाभ उठाकर हजारो नारियों का जीवन बर्बाद करते है। ऐसे लोगों के कारण नारी जीवन अधिक पीडित, शोषित बना है। इसीतरह इस उपन्यास में विधवा नारी की स्थिति कितनी कष्टप्राय, अपमानजनक, दुखद होती है तथा उसे समाज में रहकर मुसीबतों का सामना करना पडता है आदि सबका यथार्थ चित्रण है। यहाँ स्पष्ट है गौरी याने रतिनाथ की चाची का विधवा जीवन की करुण कहानी ही है।

आँचलिक उपन्यासकार नागार्जुन ने अपने उपन्यास '**बलचनमा**' (1952) में भी नारी की घुटनभरी जिंदगी का वर्णन किया है। बलचनमा जब चौदह बरस का था, तब उसके पिता को जमीनदारों ने मार डाला। घर में उसकी माँ, दादी और छोटी बहन रेबनी थी। इतनी कम आयु में बलचनमा और रेबनी पिता के छत्र से वंचित हो गये। माँ विधवा हो गयी। परिवार का सारा बोझ बलचनमा पर पड़ा। इतना सब होने के बावजूद भी बलचनमा की माँ एक स्वाभिमानी नारी बनकर रह गयी, वह गरीबी और वैधव्य की दोहरी मार की परवाह न कर परिश्रम और स्वाभिमान से जीवन यापन करने लगी। वह अपनी लडकी रेबनी की इज्जत जमीनदारों के हाथों में बेचने को तैयार नहीं। स्वयं रेबनी भी माँ के समान स्वाभिमानी है। वह जमीनदारों के जुल्मों को सहन करती है, लेकिन इज्जत पर आँच नहीं आने देती। बलचनमा के पिता को मारकर भी जमीनदार चूप नहीं बैठे तो उसकी बहन रेबनी की इज्जत पर हाथ डालने की भी कोशिश करते है। इससे यही स्पष्ट होता है कि जमीनदार जैसे बडे लोग नारी का केवल भोग्य नारी के रुप में देखते है। इससे निम्न जाति के औरतों की इज्जत पर हाथ डालना वे अपनी बहादुरी समझते है। रेबनी हाथ न आनेपर उसका सारा गुस्सा जमीनदार बलचनमा की माँ पर उतार देता है और उसकी पिटाई करते है, फिर भी वह टस से मस नहीं होता और अपनी इज्जत की रक्षा करती है। यहाँ स्पष्ट है पारिवारिक विपत्तियों में भी अपनी इज्जत की रक्षा करनेवाली एक संघर्षप्रिय, चेतीत नारी बलचनमा की माँ है, तो जमीनदार नारी को खिलवाड मानकर दुर्व्यवहार करनेवाले नरपशु है। 'विधवा' नारी के लिए शाप है मगर नारी को वह जीवन भी जीना पडता है। उपन्यासकार ने इस पर कलम चलाई है।

नागार्जुन ने नारी समस्या में बाल-विधवा समस्या पर भी प्रकाश डाला है। बलचनमा के मालिक की बडी बेटी जयमंगला का बचपन में विवाह हुआ, लेकिन बाल विधवा का जीवन उसे प्राप्त हुआ। बाल-विधवा बनी जयमंगला अंत में एक दर्जी के साथ भाग जाती है। इस प्रकार बाल विधवा नारी शोषण का एक करुणामय रुप है। बाल विधवा की दर्दभरी यह कहानी है।

नागार्जुन के **'नई पौध'** (1953) में नारी शोषण का विस्तृत चित्रण मिलता है। खोखाई पंडित जो सात लडकियों और पाँच लडकों के पिताजी है। पंडित ने अपनी बेटियों को बेच डाला था। कोई गूँगे के पल्ले पडी थी तो कोई बौडम के पल्ले, कोई तीन जिला पार फेंक दी गई थी, तो कोई पाँच सौ कोस पर। उनमें से चार को भाग्य ने वैधव्य के बीहड जंगल में डाल दिया था एक पगली हो गयी थी, एक को उसके आदमखोर पति ने किरासन तेल की मदद से जलाकर खाक कर डाला था।''[27] इसीतरह यहाँ पंडित ने खुद अपनी लडकियों का जीवन बरबाद किया था। और उसे दु:खद जीवन जिने के लिए बाध्य कर दिया था। खोखा पंडित अपनी नतनी बिसेसरी को भी एक साँठ साल के बूढ़े के साथ शादी करने के लिए कहता है। खोखा पंडित अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए एक साठ साल के आदमी के साथ पंद्रह सासल की लडकी का ब्याह रचा था। थोडे से पैसों के लिए घटकराज ऐसे अनमेल ब्याह तय करते है। और खोखाई पंडित जैसे लोग अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए नारी का शोषण करते है। इससे यह स्पष्ट होता है कि अज्ञान एवं अशिक्षा की वजह से गाँव में नारियों का शोषण होता है। पंडित, घटकराज जैसे स्वार्थि लोग अनमेल ब्याह करके नारियों को दुखद जीवन एवं कष्टप्राय जीवन जीने के लिए बाध्य करते है।

नागार्जुन के **'दुखमोचन'** उपन्यास में विधवा नारी का चित्रण आया है। 'दुखमोचन' उपन्यास में दुखमोचन की शशीकला मामी जो विधवा है। वह दुखमोचन के यहाँ रहकर परिवार की सेवा करती है। लेकिन उसका जीवन वैधव्यपूर्ण है। इसका चित्रण मिलता है। नागार्जुन के उपन्यासों में प्रताडित एवं शोषित नारी पात्रों के चरित्र का विकास जीवन की यथार्थ भावभूमि पर हुआ है। मधुरेश के शब्दों में - ''नागार्जुन के पुरुष पात्रों की अपेक्षा स्त्री-पात्र अपनी मिट्टी और परिवेश के प्रति अपेक्षाकृत और भी सच्चे है।''[28]

समाज में परिवार का मूख्यत: नारी एक महत्वपूर्ण अंग है। इससे बिना घर की व्याख्या पूरी नहीं हो पाती, लेकिन उसे ही आज समाज ने रुढी परंपराओं को बंधन में जकड दिया है। अशिक्षा के कारण नारी बहुत शोषित थी। आज समाज की स्थिति बदल रही है। नारी ने घर के बाहर कदम रख दिया है, अपने हक के लिए वह जाग्रत हो रही है, अपने पर हुये अन्याय का वह मुकाबला कर रही है। पुरुषों के साथ-साथ हर क्षेत्र में उसने अपनी पहचान बना ली है। फिर भी नारी पुरुषों के आगे नहीं जा सकती क्योंकि हमारी संस्कृतिही पुरुष प्रधान संस्कृति है। घर के साथ-साथ नौकरी की जिम्मेदारी संभालना, सास-ससूर, जेठानी-ननंद आदि कई रिश्तों में अटकी हुई नारी जिम्मेदारियों को छोडकर शहर नहीं आ सकती। अत: किसी-न-किसी रुप में कहीं-न-कहीं नारी आज भी शोषित है। धनाभाव के कारण जमीनदार शोषण करते है। भोलेपन, भावुकता का लाभ धार्मिक व्यक्ति उठाता है। अबलापन का सहारा लेकर परिवारवाले उसे पीड़ा देते है। रुढ़ि परंपरा से जुडी मानसिकता के कारण विधवा का पुनर्विवाह नहीं होता। नारी को भोग्या मानकर बिकाऊ वस्तु मानना नारी शोषण का कारण है। अत: बाल विवाह को संभाव्य करके विधवा विवाह को समाज स्वीकृति दे, नारी शिक्षा को अनिवार्य माना जाये, नारी को पुरुष के समान सम्मान दिया जाये, तो यह शोषण कम होगा। नहीं तो हाय: अबला तेरी यह कहानी, आँचल में दूध और आँखों में पानी यह कथन सच ही रहेगा। नागार्जुन ने 'नई पौध' में अनमेल ब्याह को रोककर नई चेतना का निर्माण किया है और नारी शोषण के समस्या पर सही उपाय का वर्णन किया है।

3) जातीय भेदाभेद की समस्या :-

धर्म के साथ जाति एवं गोत्र का महत्त्व भारतीय समाज व्यवस्था में चलता आ रहा है। ग्रामीण लोग अपनी जाति व्यवस्था को सुरक्षित रखना चाहते है। परिणामत: जातीय भेदाभेद की समस्या का निर्माण हुआ। आज देश में जातियता एवं सांप्रदायिकता की दग्धता फैल रही है। ग्रामीण जीवन में भी इसके दर्शन होते है। डॉ.देवेश ठाकुर के मतानुसार - ''एक ओर राष्ट्रीयता की भावना से प्रेरित भारतीय समाज एक स्वर में अंग्रेजी शासन के विरुद्ध उठ खडा हुआ था और दुसरी स्वयं उसमें

नगर ही नहीं ग्राम्य और आंचलिक स्तर पर भी जातिवाद का विष बीज विकास पा रहा था। जिससे व्यक्ति-व्यक्ति के बीच मतभेद की खाई गहरी हो रही थी और व्यक्ति समाज जातिगत आधारपर अलग-अलग समूहों में विभाजित और विच्छिन्न होकर परस्पर द्वेष, ईर्ष्या और शत्रुता के भाव को बढाता हुआ राष्ट्रीय शक्ति, एकता और उदात्त मानवीयता के आदर्शों को धूमिल कर रहा था।''[29] यहाँ यह कथन यथार्थ लगता है। हिंदी के नागार्जुन के उपन्यासों में भी इसके दर्शन होते है। आलोच्य उपन्यासों में जातीय भेदाभेद की समस्यापर कहाँ तक प्रकाश डाला है। इस पर हम सोचेंगे -

नागार्जुन ने **'रतिनाथ की चाची'** (1948) का कुल्ली राउत निम्न जाति का है। वह चुपके से कुछ मंत्र सिख लेता है। जब इस बात का रतिनाथ के पिता जयनाथ को पता चलता है तो वह फुफकार उठता है, ''साले की चमडी उधेड लूँगा। शूद्र है तो शूद्र की भाँति रहे।''[30] इससे यही स्पष्ट होता है कि निम्नजाति के लोगों को धर्म मंत्र के पठन-पाठन का कोई अधिकार नहीं। एक दिन रतिनाथ तरकुलवा जाते हुअे मार्ग में तालाब के किनारे बैठकर जल्दी-जल्दी संध्या करता है। इस पर कुल्ली राउत ने रतिनाथ से मुस्कुराकर कहा - ''लो बाप के गुण सीख न गये।'' रतिनाथ को इस बात पर सत्यता नजर आती है, वह विचार करता है उच्च जाति के ब्राह्मण और निम्न जाति के कुल्ली राउत की विषम सामाजिक स्थिति का कारण वस्तुत: धर्म और जाति के आरोपित विधि-विधान ही है। रतिनाथ आगे सोचता है - ''अगर यह भी ब्राह्मण के घर में पैदा हुआ होता, तो निश्चय ही उसके बदन पर फटे-पुराने कपडे न होते, हमारी जुठन खाकर हमारी पहिरन पहनकर इसके बच्चे न पलते। उन्हें कभी स्कूल और पाठशाला जाने का अवसर नहीं मिलता। क्या मर्द, क्या औरत इन लोगों का जीवन बडी जातिवालों की मेहरबानी पर निर्भर है।''[31] तरकुलवा गाँव की रचना भी जाति व्यवस्था के अनुसार है। ब्राह्मण, रजपुत, बनिया, ग्वाला आदि गाँव के एक ओर तो, मुसलमान, दुसरी ओर, निम्न जातिवाले उसके बाद। इससे स्पष्ट है ग्राम व्यवस्था भी जातीयता से पूरी तरह प्रभावित है, ऐसा लगता है।

नागार्जुन के **'बलचनमा'** (1952) उपन्यास में भी जातियता पर विचार किया है। बलचनमा खुद एक अहिर मजदूर तथा ग्वाला है और उसकी जाति के अनुसार उसे मालिक के यहाँ भैंसे

चराने का खिलाने-पिलाने का काम मिलता है। यहाँ मैथिल ब्राह्मण छोटी जातिवालों का छुआ हुआ भोजन नहीं खाते। फूलबाबू के दादा, परदादा भी छोटी जातिवालों को लुटते थे। नागार्जुन इसका वर्णन करते हुअे लिखते है - ''छोटी जातवाले जन बनिहारों के पास होता ही क्या ? -- मगर भैया इन कसाइयों के चलते बेचारों के पास यह सब भी नहीं रह पाता। नीलाम करा लेते है। कुर्क हो जाती है। -- बडी जातवालों की माया तब भी अपार थी और अब भी। बात-बात में अपनी गोरी वही लाल करते है।''[32] बलचनमा के गाँव के वैद्य, आदमी कितना भी बीमार क्यों न हो पर छोटी जातिवालों के यहाँ जाकर कभी भी नाड़ी नहीं देखते, दूर से ही दवा देते है। बलचनमा यहाँ निम्न जाति का समझा जाता है और मनचाहे उसपर जुल्म ढाये जाते है। उसका सारा परिवार अपनी जाति के कारण ही पीसता जा रहा है। यहाँ स्पष्ट है कि जातियता के कारण ग्रामव्यवस्था में दरारें पडी तो दूसरी ओर व्यक्ति-व्यक्ति में भेदभाव बना रहा। यहाँ तक वैद्य अपना धर्म भूल गये, निम्न जातवालों को बिना छूकर दूरी से दवा देनेवाले वैद्य किस तरह मरीजों पर इलाज करेंगे ? यह सवाल है। इस प्रकार जातीयता की समस्या कितनी भयावह है यह स्पष्ट होता है।

नागार्जुन के **'बाबा बटेसरनाथ'** (1954) में रुपडली गाँव की जातीय व्यवस्था की समस्या स्पष्ट की है। रुपडली गाँव में अनेक जाति के लोग रहते है। वहाँ जाँति-जाँति में फर्क किया जाता था। ब्राह्मण, रजपूत, भूईहार आदि कुछ जातियों के जवानों को ही फौज में जगह मिलती थी। बडी जातवालें जमीनदार निम्न जाति को बहुत हल्का समझते थे, अपने फायदे के लिए कुछ भी करने को तैयार रहते थे। पाठक और जैनरायण, जैकिसुन और उसके साथियों को जेल में भेजने के लिए एक गूँगे चमार की हत्या करते है। इसीतरह जमीनदार उँची जातवाले निम्न जाति पर जुल्म करते रहे और निम्न जातिवाले अपने जुल्म को सहते रहे। यहाँ स्पष्ट है निम्न जाति के लोगों को न नौकरी में स्थान था न समाज व्यवस्था में पनाह। चारों ओर से आतंकित जिंदगी जी रहे थे, ऐसा यहाँ लक्षित होता है।

नागार्जुन के **'दुखमोचन'** (1957) उपन्यास में जाति भेदाभेद का वर्णन आया है। दुखमोचन के मित्र वेणीमाधव की बहन माया जो विधवा है, और कपील जयमाधव का स्कूली दोस्त था।

वह जाति से रजपूत था। माया विधवा तो थी ही लेकिन कपिल और उसकी शादी में जाति पाति की भी समस्या सामने आ गयी थी। उपन्यास में जातियता का विस्तृत वर्णन मिलता है। देहाती मजदूरों, भाई-बन्दों ने अपनी पंचायम में फैसला किया था कि ''उँची जात वालों के यहाँ अब वे अपमानजनक तरीकों से न कोई काम ही करेंगे न कुछ इनाम-इकराम ही लेंगे, जूटन में चाहे अमृत ही क्यों न रह गया हो, उसे कोई नहीं उठाएगा ---।''[33] इसतरह ग्रामों में मजदूरों का उँचे लोग शोषण करते थे। उन्हें जूठन देना, अपमान करना, आदि तरिकों से उनपर अत्याचार करते थे। दुखमोचन उपन्यास में नित्याबाबू, पूलकितदास, आदि लोग ऐसे है जो उँची जाति के होने के कारण गाँव के किसानों को फँसाकर उनका अनाज हडपना चहाते थे। खानदारी घमंड, जात-पात का टंटा, दौलत की धौंस पर आदि के कारण किसानों पर उनका रोब था। इसी तरह यहाँ स्पष्ट है। देहातो में उँची जाति वाले लोग गरीब और किसानों को पर अत्याचार करते थे। और धीरे-धीरे गरीब किसान लोगों मं उँची जात वालों के खिलाफ जागृति पैदा होने लगी है, ऐसा यहाँ लगता है।

जाति-पाति का प्रभाव गाँव के जन-जीवन में लक्षित होता है। हर जाति का व्यक्ति अपनी जाति को श्रेष्ठ मानने की कोशिश करता है, इससे जातीय संघर्ष निर्माण होता है। जातिवाद सांप्रदायिकता के मूल में है। इसी जातिवाद के कारण व्यक्ति-व्यक्ति के बीच दरारे गहरी हो गई है। एकता, उदात्त मानवीयता पर प्रश्न चिन्ह है। आज कुछ हद तक परिस्थिति बदल गई है। लेकिन इस जातियता को कोई भी मिटा नहीं पाया है। जातियता की बेडी में जकड़े हुए ये लोग आज भी पूरी तरह से बाहर नहीं आये है। इसीतरह अगर लोग जातियता के बेडी में अटके रहेंगे तो न व्यक्ति का विकास होगा और न ही देश का। जातियता की समस्या देश की एकता, अखंडता में दीवार बनकर रही है। इसे जब मिटाया जायेगा तब मानव मानव को पहचानेगा।

4) भ्रष्टाचार की समस्या :-

आज देश जिस समस्या में घिरा हुआ है वह समस्या है भ्रष्टाचार की। जातीयता, सांप्रदायिकता के साथ भ्रष्टाचार की समस्या भी महत्वपूर्ण समस्या है। शिक्षित-अशिक्षित नेता, सरकारी

अफसर, पुलिस, शिक्षा व्यवस्था इससे प्रभावित है। आज ऐसा कोई भी क्षेत्र नहीं है, जिसमें भ्रष्टाचार न होता हो। सभी प्रकार के लोग इस भ्रष्टाचार की समस्या से ग्रस्त हुये है। धन कमाना, बिना मुसीबतों से काम में सफलता पाना, अवैध धंदों की रक्षा करना आदि कई कारणों ने भ्रष्टाचार को जन्म दिया है।

ग्रामीण लोगों के अज्ञान-अंधविश्वास और भोले पन का फायदा उठाकर उन्हें लूटने का काम जमीनदार, महाजन, ठाकुर, सरकारी अफसर करते है। इन लोगों की भ्रष्टाचारी प्रवृत्ति के कारण ग्रामीण आंचलों में भ्रष्टाचार बढता जा रहा है। इस भ्रष्टाचारी प्रवृत्ति के दर्शन नागार्जुन के उपन्यासों में लक्षित होते है। भ्रष्टाचार का स्वरुप और उसके कारण ग्रामीण जन का होनेवाला शोषण की समस्या पर आलोच्य उपन्यासों के आधारपर यहाँ देखेंगे।

नागार्जुन ने '**रतिनाथ की चाची**' (1948) में शिक्षा व्यवस्था में होनेवाला भ्रष्टाचार का वर्णन किया है। रतिनाथ पर पाठशाला के पंडितजी बडे प्रसन्न रहते हैं क्योंकि पंडितजी के सारे काम वह करता है। पंडितजी केवल पढाते नहीं थे बल्कि उसके साथ पुरोहित का भी काम करते। ''बारह रुपया महिना डिस्ट्रिक्ट बोर्ड से भी लेते थे, और पाँच रुपया राजा बहादुर से भी।''[34] यह कथन इसी बात का सबूत ही है। स्वतंत्रता आंदोलन में कई नेताओं ने देश के नाम पर धन कमाया। उनके साथ-साथ उनके चेले भी गाँव के लोगों को ठगाकर अपनी जेब भरते रहे। चाची ने चर्खा चलाने का काम लिया। हर महिने पचास - तीस रुपये मिलते। लेकिन उसमें भी भ्रष्टाचार का रुप नजर आता है। चाची बेहद बारीक सूत कातती। चर्खा संघवाले चाची के सूत को कभी एक सौ दस नंबर करार करते तो कभी साठ। ''चाची के समझ में यही नहीं आ रहा था कि गांधीजी के चेले इस प्रकार की बेईमानी क्यों करते है।''[35] इसी तरह देश को चलानेवाले अपने को नेता कहलानेवाले भ्रष्टाचार का सहारा लेकर धन कमाते है। गांधीजी का नाम लेकर भ्रष्टाचार करनेवाले की खाल उतारने का काम यहाँ किया है।

भ्रष्टाचार की समस्या नागार्जुन के '**बलचनमा**' (1952) उपन्यास में दिखाई देती है। जमीनदार अपने रुपयों के बल पर हमेशा गरीब लोगों पर जुल्म करते है। तथा हर फैसला उनकी तरफ से होता है। फूल बाबू के परदादा बनैली राज में तहसीलदार थे। तब ''अदालत उनकी, हकिम उनका,

थाना-दरोगा उनका, पुलिस उनकी, गरीबों के लिए सिवाय लात-जूता के और है ही क्या?''[36] यह रुप जमीनदारों का है। लेकिन नेता लोग इससे आगे निकले। फूलबाबू जिन्होंने स्वतंत्रता आंदोलन में अपने आपको झोंक दिया था, वही आगे चलकर लोगों का रुपया हडप कर लेते है। रिलीफ फंड के लिए जो रकम गाँव को मिली थी, वह बराबर में नहीं बाँटी तो जैसा मूँह, जिसकी जैसी आवाज उसको उतनी ही रक्कम मिली। इस बारे में मोसंमान कुन्ती बलचनमा से कहती है - ''ये लोग जुलुम करते है बेटा, देते है दो और कागज पर चढाते है दस ! इमान-धरम इनका सब डूब गया, तेल जरे तेली का और कटे मशालची का ! छोटे मालिक का सरबेटा आया था अफसर बनके खैरात बाटने ! हो न हो हजार पाँच सौ उसने जरुर मार लिया होगा।''[37] इसीतरह गाँव के भोले-भाले किसानों को सभी लूटते रहे चाहे वह जमींदार हो, पुलिस हो, सरकारी अफसर हो या नेता। वे सभी इस भ्रष्टाचारी दूनिया में अटके हुअे है और ग्रामवासियों को फँसाते रहे इसलिए आज यह कहा जाता है कि आजादी के लिए जनआंदोलन करके अंग्रेजो को हटाया, अब जनसंघर्ष करके भ्रष्टाचार को मिटाना है। इससे स्पष्ट है आज का मानव भ्रष्टाचारी बना है, इस पर भी उपन्यासकार ने सोचा है।

नागार्जुन के **'नई पौध'** (1953) में भ्रष्टाचार की समस्या का वर्णन मिलता है। खाद्यपूर्ति विभाग में कार्यरत कर्मचारी भी भ्रष्ट है। पिछले वर्ष नव युवक दल के लोगों ने डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट के पास दरखास्त दी - ''हमारे गाँव के मुखिया चीनी और किरासन के बँटवारे में धाँधली करता है, इस गडबडी को फौरन दुरुस्त किया जाये।''[38] मुखिया को इस काम में भ्रष्ट अफसरशाही का आशीर्वाद प्राप्त है। इस दरखास्त का परिणाम यह हुआ - ''सप्लाई इन्सपेक्टर आकर गवाही ले गया। दरखास्त पर नौ आदमीयों के हस्ताक्षर थे। मुखिया के आतंक से इन्सपेक्टर के सामने पाँच जन ही आये। उन पाँचों के नाम पर अलग-अलग कार्ड बना दिया गया, बस।''[39] यह विरोध करनेवालों का एक तरिका है। स्पष्ट है कि इस विभाग में कार्य कर रहे इन्सपेक्टर और अफसर भी भ्रष्ट है एवं दूकानदारों से या लाइसेंसदारों से रिश्वत लेकर अपनी जेबे भरते है, इन्हें जनसाधारण के कष्ट की तनिक भी परवाह नहीं। सरकारी अफसर जनसाधारण के प्रार्थना-पत्रों पर कोई ध्यान नहीं देते।

नागार्जुन ने **'बाबा बटेसरनाथ'** (1954) में पाठक और जैनरायण एक चमार की हतया करते है लेकिन पुलिस से उनकी दोस्ती होने के कारण वे जैकिसुन पर जुल्म थोपते है। जैकिसुन को जेल की सजा होती है। तब दयानाथ उनको छुडाने के लिए थाना अदालात-कचहरी से लेकर काँग्रेस के एम.एल.ए.बाबू उग्रमोहनदास और बाबु कुलानन्द दास एम.पी. को मिलता है। परंतु अश्वासनों के अलावा उन्हें कुछ भी नहीं मिलता। तब दयानाथ सोचता है - ''आजादी ! फि ! आजादी मिली है, हमारे उग्रमोहन बाबू को कुलनन्ददास को --- काँग्रेस की टिकट पर जो भी चुने गये है उन्हें मिली है आजादी। मिनिस्टरों को तो और उँचे दरजे की आजादी मिली है। सेक्रेटरियट के बडे साहबों को भी आजादी का फायदा पहूँचा है।''[40] इस नई भ्रष्ट काँग्रेस समाज व्यवस्थापर नागार्जुन ने यथार्थ शब्दों में व्यंग्य किया है।

नागार्जुन ने अपने उपन्यास **'दुखमोचन'** (1957) में भ्रष्टाचार का वर्णन किया है। मुन्शी पुलकितदास डाकखाने में काम करते है। डाकखाने में दो-तीन खाकी थैले, लकडी की एक छोटी सी अलमारी, लोहे का छोटा सेफ। कोने में ढिबरी और सील करने के लिए दपडों की टिकिया पडी थी। डाकिया का काम भी पोस्ट मास्टर ही करता था। मुन्शीजी ने अपने दूसरे भतीजे को डाँक बाँटने के ड्यूटी पर तैनात कर रखा था। डाकखाने में आयी हुअी मनीऑर्डर की रकमें महीना-महीना, डेढ-डेढ महिना रोक ली जाती थी। लोगों को बहौत कष्ट होता था। इसीतरह मुन्शी डाकखाने में अनियंत्रित कारभार करता था। उसने अपने ही भतीजे को डाकखाने में काम दिया। ताकि दोनों मिलके डाकखाने में भ्रष्ट कारभार करे और लोगों का शोषण करे। इससे यह स्पष्ट होता है कि, मुन्शी की स्वार्थी प्रवृत्ति के कारण सरकारी कामों में भी रुकावटे करता था और लोगों का शोषण करता था।

भ्रष्टाचार केवल नगर की समस्या बनकर नहीं रही, तो उसकी जड़े गाँवों के भीतर प्रवेश कर गई है। भ्रष्ट जमीनदार, नेता लोग, पुलिस, सरकारी अफसर आदि सभी में भ्रष्टाचार का रुप दिखाई देता है। इस भ्रष्टाचार ने देश में एक नई चुनौती खडी कर दी है। हर आदमी पैसे, रुपये के पीछे दौड रहा है। फिर वह चाहे किसी भी रुप में मिले, लेकिन मिलना जरुरी है। आज भी इसी भ्रष्टाचारी प्रवृत्ति ने देश की नीव को हिला दिया है। लेकिन इसमें पीसनेवाला केवल सामान्य, मध्यम और

निम्नवर्ग है। इनकी फिरयाद सुननेवाला कोई भी नहीं है। एक आदमी दुसरे आदमी को लूटता है, उसपर अन्याय करता है, कभी-कभी उसी में उसका अंत होता है, लेकिन इस प्रवृत्ति को मिटानेवाला कोई भी नहीं है। भ्रष्ट समाजव्यवस्था को उखाडनेवाला कोई एक नहीं हो सकता, सभी ने मिलकर तय किया या अपनी ईमानदारी से काम किया तो यह मिट सकता है। यहाँ स्पष्ट है भ्रष्टाचार का उद्‌गम सरकारी दफ्तरों, अमीरों से होता है, सामान्य व्यक्ति से नहीं। जब तक इसे समाप्त नहीं किया जाता तब तक देश का विकास संभव नहीं है। इसीलिए इस भयावह समस्या का हल करना सभी देशवासियों का राष्ट्रीय कर्तव्य बना है।

5) अशिक्षा की समस्या :-

19 वी शताब्दी में भारत में मैकाले की शिक्षा नीति से आधुनिक शिक्षा का प्रारंभ हुआ। अंग्रेजों की कूट नीति इसमें शामिल थी। अंग्रेज शिक्षा के माध्यम से भारत में एके ऐसा शिक्षित वर्ग तैयार करना चाहते थे, जो उनकी शासन व्यवस्था की नीव को सुदृढ रख सके। उनकी यह नीति थी कि वैज्ञानिक तथा टेक्नीकल शिक्षा का अधिक प्रचार न हो, ताकि औद्योगिक क्षेत्र में भारत स्वतंत्र रुपसे विकास न कर सके और ब्रिटेन के लिए उसका मुनाफा होता रहे। भारत की शासन व्यवस्था सँभालने के लिए कुछ ही व्यक्ति शिक्षा ले सके। इसीलिए अंग्रेजों ने शिक्षा प्रणाली को महंगा बना दिया। विश्वविद्‌यालय की शिक्षा पर रोक लगा दी। परिणामत: जनसाधारण लोग शिक्षा से वंचित रह गये। जिन लोगों ने उच्च शिक्षा ग्रहण की उन्होंने सिर्फ अपनी रोजी-रोटी के लिए इसका उपयोग किया। अत: शिक्षित वर्ग अपने आपको शासक समझने लगा और अशिक्षितोंपर शासन करने की भावना से वह कार्य करता रहा। शिक्षा का उद्देश्य केवल उपाधि लेना और नौकरी प्राप्त करना रह गया। इसी कारण शिक्षा के प्रति उपेक्षा का भाव, महंगी शिक्षा तथा उच्चतम शिक्षा पर रोक के कारण समाज का एक ही वर्ग शिक्षा प्राप्त कर सका। सर्वसाधारण जनता शिक्षा से वंचित रही।

शिक्षा से साक्षर बना व्यक्ति अपना विशिष्ट दृष्टिकोन स्वीकार करता हुआ जिंदगी जीता है। शिक्षा प्रसार में सरकार की भूमिका अहम रहती है। यदि सरकार शिक्षा प्रसार में भेदपूर्ण

नीति अपनाती है तो शिक्षा विकास का नहीं बल्कि शोषण का आयाम बनती है। ऐसी हालत अंग्रेजों के काल में दिखाई देती है। इसी काल में अज्ञान, अशिक्षा एक बडी समस्या थी, जिसका यथार्थ रुपों में वर्णन साहित्य में हुआ है। अज्ञान के कारण ग्रामवासियों का शोषण होता रहा है। धार्मिक व्यक्ति धर्म के नाम पर, जमीनदार धन के बलपर, शासक सत्ता के आधारपर, ग्रामवासियों का शोषण करते रहे है। आज धीरे-धीरे अनिवार्य शिक्षा नीति के फलस्वरुप ग्राम जीवन की स्थिति परिवर्तित हुआी है। लेकिन काफी मात्रा में नहीं। नागार्जुन ने अपने उपन्यासों में अज्ञानी ग्रामवासियों की हालत स्पष्ट की है, उस पर हम यहाँ सोचेंगे।

नागार्जुन के **'रतिनाथ की चाची'** (1948) में जयनाथ संस्कृत श्लोक पढाना या पठन करना केवल अपना अधिकार समझता है। कुल्ली राउत को संस्कृत के कई स्तोत्र याद है, उसे गायत्री भी आती है। जयनाथ को यह बात पता चलते ही वह फुफकार उठता है। इससे स्पष्ट होता है, उच्च वर्ग का ही शिक्षा का अधिकार मानने की ग्रामवासियों की प्रवृत्ति दिखाई देती है।

भारत में सबसे अधिक अशिक्षित लोग गाँवों में पाये जाते है और उसमें भी अधिकतर नारियाँ ही शिक्षा से वंचित रही है। इसके दुष्परिणाम भी नारियाँ आज तक सहती आई है। ग्राम में नारी को पढाना-लिखाना मना था। नागार्जन के **'बलचनमा'** (1952) में बलचनमा की बहन रेबनी पढ़ी लिखी न होने के कारण अपनी बीमार माँ की खबर बलचनमा तक नहीं भेज सकती सिर्फ बडे बाबूओं के लडके पढे लिखे थे। वह तो उनसे भी लिखवा नहीं पाती क्योंकि उन लडकों की बुरी नजर रेबनी पर टिकी रहती। भला वह कैसे उनके पास जाती। रेबनी की अशिक्षा उसकी मजबुरी बन जाती है। यहाँ स्पष्ट है अशिक्षा के कारण नारियों का शोषण हो रहा है। नारी का शारीरिक, मानसिक, भावनिक स्तर पर शोषण होता है। रेबनी इसका उदाहरण है। नागार्जुन ने नारी शोषण का एक नया आयाम स्पष्ट किया है।

नागार्जुन के **'नई पौध'** (1953) में अशिक्षा का विस्तृत रुप में वर्णन आया है। खोखाई पंडित ने अपने लडकियों का ब्याह अच्छे लडके, घर, आदि सब देखकर नहीं किया था - ''रामेसरी को छोडकर बाकी छहो बेटियाँ खोखा पंडित ने बेच डाली थी।''[41] किसी को गुंगे के पल्ले तो

किसी को वैधव्य ने जखड लिया था तो किसी को बौड म के पल्ले। इसी तरह अशिक्षा की वजह से खोखा पंडित ने लडकियों का शोषण किया था। और खोखा पंडित ने अपनी नतनी बिसेसरी का ब्याह भी साठ साल के, पाँच बच्चों के आदमी से तय की थी। बिसेसरी सिर्फ पंद्रह साल की थी। और खोखा पंडित उसका विवाह उस बूढे आदमी से करवाना चाहता था। उसने अनमेल ब्याह रचा था। इसीतरह अशिक्षा की वजह से लडकी की शादी कम उम्र में और वह भी साठ साल के बुढे और पाँच बेटों के पिता से करवाना, अशिक्षा और अज्ञान का उदाहरण है। यहाँ स्पष्ट होता है कि अशिक्षा के कारण लडकियाँ खुद अपना फैसला नहीं कर पाती और अनमेल ब्याह के लिए तैयार हो जाती है। इसका चित्रण मिलता है।

नागार्जुन के 'बाबा बटेसरनाथ' में रुपडली गाँव की जनता की कथा-व्यथा है। रुपडली गाँव पर जमीनदारों का प्रभाव है। शिक्षा सुविधा का गाँव में अभाव रहा है। शिक्षा के लिए नगरों में जाना पडता था। परिणामत: जमीनदार के बेटे शिक्षा प्राप्त करने में सफल रहते है। सामान्य जनता गरीबी, अर्थाभाव के कारण अज्ञानी रही है। उनके अज्ञान का लाभ उठाने की जमीनदारों की प्रवृत्ति रही है। जमीनदारों द्वारा शोषण, धार्मिक व्यक्तिद्वारा शोषण, सरकारी अफसरोंद्वारा होनेवाला शोषण अज्ञान काही परिणाम है। नागार्जुन ने इसपर भी प्रकाश डाला है। रुपडली गाँव का किसान शत्रुमर्दन राय जमीनदारों का कर्ज चुका न सका और उसपर लगाया हुआ ब्याज दुगुना होने के कारण मूल रकम तो वैसी ही रही। उसकी अशिक्षा और अज्ञानता के कारण मूल रकम और उसका ब्याज वह जान न सका और जमीनदारों की बर्बरता का शिकार हो गया।

शत्रुमर्दनराय निम्न जाति का था। गाँव में निम्न जाति को शिक्षा का अधिकार नहीं था। रुपडली गाँव में केवल जमीनदारों के लडके ही शिक्षित थे। जैनारायण का बेटा लोको इंजिनियरिंग की उँची डिग्री पाकर जमालपूर के रेल्वे वर्कशॉप में चार सौ की तनख्वाह कमा रहा था। टुनाई पाठक का लडका एम.ए. और वकालत का इम्तिहान पास करके जज ससूर की सिफारिश से इन्कमटैक्स का जिलाधिकारी हो गया था। इसके अतिरिक्त दो वकील, दो प्रोफेसर, एक डिप्टी मैजिस्ट्रेट, एक फोरेस्ट ऑफिसर आदि सब बडे बाबूओं के ही लडके थे। उँची और महँगी शिक्षा लेने के बाद इन सभी की आँखों

पर मोटी-मोटी ऐनके पड गयी थी, मिजाज चढ गया था।''[42] रुपडली गाँव में शिक्षा व्यवस्था उच्च वर्ग के लिए ही थी। इस उपन्यास में रुपडली गाँव की अशिक्षा की वजह से आर्थिक स्थिति भी दयनीय बनी है। बेकारी का ज्वर वहाँ फैला हुआ है। ''लोगों को दिन-भर की कडी मेहनत के बाद दुअन्नी हाथ आती थी। चावल तो मिलते नहीं थे। जुन्हरी और महुआ जैसा मोटा अनाज मिलता था। इस गाँव के लोग आजीविका के लिए संत्रस्त है। उन्हें मजबूरी करने के लिए घर भी छोडना पडता है। ''वहाँ केवल साठ प्रतिशत परिवार ऐसे थे जिनका गुजारा मजदूरी पर था। वे काम के लिए पड़ोस के कई गाँवों तक चले जाते।''[43] इसीतरह गाँव में अशिक्षा की वजह से जनसंख्या बढ गई है। और इसी वजह से आर्थिक शोषण होने लगा।

'दुखमोचन' (1957) नागार्जुन के उपन्यास में चित्रित टमकाकोइली गाँव की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है। अधिकांश खेत-मजदूर रोजी-रोटी की तलाश में अपना-अपना इलाका छोडकर पूरब-पश्चिम जानेवाली रेलगाडियोंपर सवार हो चुके थे।[44] टमकाकोइली ग्राम में अशिक्षा का साम्राज्य है। नि:संदेह स्कूल खुले है, पर उनमें तो नयी पीढी शिक्षा ग्रहण कर रही है, पुरानी पीढी तो अशिक्षित है। नयी पीढी में जो किसान का लडका पढ-लिख जाता है, वह किसान नहीं रहता, खेती नहीं करता, नगरों की ओर भागता है। स्पष्ट है अशिक्षा की वजह से गाँव की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है और खेत-मजदूरों को रोजी रोटी के लिए बाहर जाना पडता था।

शिक्षा के अभाव से अज्ञान, अंधविश्वास, रुढि-परंपरा का प्रभाव बढ जाता है। किसानों के शोषण का मुख्य कारण भी यह अशिक्षा ही है। फिर वह चाहे 'बलचनमा' का बलचनमा हो या 'बाबा बटेसरनाथ' का शत्रुमर्दनराय हो, दोनों भी अशिक्षा के कारण जमीनदारों से मुकाबला नहीं कर पाते। यहाँ स्पष्ट है अशिक्षा सामाजिक समस्या के मूल में है। उसी तरह आर्थिक समस्या की नींव रही है। उपन्यासकारने उसपर भी प्रकाश डाला है।

आज शिक्षा व्यवस्था में बदलाव आया है। भारत सरकार ने इसे अनिवार्य माना है। प्रौढ शिक्षा, नारी शिक्षा, छात्रावास, छात्रवृत्ति, आश्रम स्कूल पर बल दिया जा रहा है। प्राथमिक

शिक्षा अनिवार्य और मुफ्त होने के कारण साक्षरता में सुधार हुआ है। भारत के ग्रामीण क्षेत्र में महिलाओं की संख्या कम है लेकिन लोग शिक्षा का महत्त्व समझ गये है। नागार्जुन ने अपने उपन्यास में गाँव के अज्ञानी, अनपढ़ लोगों का चित्रण किया जो जमीनदारों के कागजाद पढ़ नहीं सकता। लेकिन धीरे-धीरे ग्रामवासियों में शिक्षा के प्रति रुचि बढ़ जाएगी, उसका महत्त्व समझ में आ जायेगा और एक दिन पूरा भारत साक्षर हो जायेगा। अशिक्षा की समस्या नहीं रहेगी ऐसा विश्वास है।

6) यौन संबंधों की समस्या :-

भारतीय जनजातीय समाज व्यवस्था में यौन संबंधों की स्थापना के लिए विवाह संस्था के अतिरिक्त अन्य मार्गों से भी यौन संबंध स्थापित किये जाते है। कुछ जनजातियों में स्वच्छन्दतापूर्वक यौन संबंध स्थापित करने की स्वतंत्रता रही है। तो कुछ जातियों में कठोर नियम भी लक्षित होते है। ''सेक्स मानव की आदिम भूख है। सामाजिक व्यवस्था को बनाये रखने के लिए आदमी ने सेक्स की भूख को दाम्पत्य के भीतर नियंत्रित किया ताकि सामाजिक संबंधों एवं मूल्यों की मूलधारणा को क्षति न पहुँचे।''[45] मनुष्य में 'काम' यह एक आवश्यक प्रवृत्ति है। साहित्य में भी इसी प्रवृत्ति को उभारा है। डॉ. दशरथ मिश्र के मतानुसार - ''अधिकांश महानगरी कहानियाँ और उपन्यास व्यक्ति की अहेतुक कामलिला को यौन संबंधों का यथार्थ रुप मान लेते है और एक आधुनिक समस्या बनाकर पेश करना चाहते है।''[46] मानव मन की इस प्रवृत्ति का चित्रण साहित्य में हो रहा है। चाहे नागरी हो या ग्रामीण हो यौन संबंधों की समस्या सर्वत्र व्याप्त है। नागार्जुन ने अपने उपन्यासों में ग्रामीण जनजीवन में स्थित यौन संबंधों पर प्रकाश डाला है। विवाह बाह्य, विवाह पूर्व, विवाहोत्तर विजातीय, अनैतिक आदि रुप में यौन संबंध आलोच्य उपन्यासों में दिखाई देते है।

नागार्जुन ने **'रतिनाथ की चाची'** (1948) में गौरी अर्थात रतिनाथ की चाची यौन संबंध की शिकार बनी है, इसका वर्णन किया है। गौरी अपने देवर जयनाथ की वासना का शिकार बनी है। अवैध मातृत्व का बोझ ढोने लगी। इसीकारण सारा गाँव उसीपर उँगलियाँ उठाता रहा। शुभंकरपूर में रहना उसके लिए बहुत मुश्किल बन जाता है। जयनाथ के संबंध केवल गौरी के साथ ही नहीं रहे तो

सुशिला, सुमित्रा आदि नारियों में फँसा हुआ वह दिखाई देता है। शुभंकरपूर में इनके अलावा विवाह की सौराठ, सभा, बिकाऔ प्रथा आदि के कारण ऐसे संबंधों का निर्माण हुआ है। इस उपन्यास में जनक किशोरी, शकुंतला और निलमणि का विवाह बिकाऔ से ही हुआ था और किसी न किसी से उनका अवैध यौन संबंध थे। ''शकुंतला का तीसरा लडका हुबहू उसके चचेरे भाई की शक्ल का था। जनक किशोर की दोनो संताने कुल्ली राउत की परंपरा में आती थी।''[47] परिणामत: इस बिकाऔ प्रथा के कारण लोग बाईस-बाईस विवाह करते थे और उनका जीवन ससुराल में कटता था। उनकी पत्नियाँ अन्य लोगों के साथ अनैतिक संबंध स्थापित कर लेती। इसी कारण समाज में व्यभिचार पनपता। बाल विवाह, अनमेल विवाह आदि के कारण विधवा नारियों की संख्या बढ़ जाती है। विधवा नारियों पर कृपा करनेवाले, 'विधवा आश्रम' की निर्मिति कराकर उनके साथ अवैध यौन संबंध रखते है। यहाँ रखेलियाँ होकर भी उनकी दृष्टि विधवा की ओर जाती ही है। इसीतरह ग्रामीण जन-जीवन में अवैध संबंध, अवैध मातृत्व, विधवा, विधवाश्रम आदि के संदर्भ में गहराई से सोचा है नारी जीवन के शोषण का यह एक आयाम लगता है।

नागार्जुन के '**बलचनमा**' (1952) में बलचनमा की छोटी मालकिन की नौकरानी सूखिया पर भूत सवार होते ही ओझा दामों ठाकुर को बुलाया जाता है। सूखिया अपनी कामवासना की तृप्ति के लिए यह सब नाटक करती है। दामो ठाकुर भूत निकालने के बहाने घर की सारी किवाडे बंद करके भूत निकालता है। इसप्रकार ओझा लोग ग्रामीण लोगों के अंधविश्वास का फायदा उठाकर अवैध यौन संबंध स्थापित करते है। यहाँ कामवासना तृप्ति के लिए कई तरिके अपनाकर अवैध संबंध, यौन तृप्ति करनेवाली नारियाँ समाज में है। जो योगी, साधु, भगत की वासना का शिकार बनती है, उसकी तरफ भी नागार्जुन ने संकेत किया है।

नागार्जुन के '**नई पौध**' (1953) में यौन संबंधों का चित्रण कम मात्रा में आया है। सहुआइन ने समूचे गाँव के ब्राह्मणों को सुपारी दी थी, भोजन दिया था, सभी लोग उसकी चर्चा करते थे। गाँव के लोगों को उसने दाल, भात, चार तरकारियाँ, बडे आम, आँवले का अचार, दही चीनी पके हुए

शहरी और कलमी आम आदि भोजन दिया था। जहाँ देखो सहुआइन की चर्चा। लोग उसे बड़ी भगतिन कहते थे। वह हरसाल जनकपुर और सिमरिया को जाती थी और वह पिछले साल बद्रिनाथ भी गई थी। लेकिन उसके अपने देवर के साथ यौन संबंध थे। उसका पति सिधा साधा था और फिर उसके यहाँ फातूरी का आना जाता भी था।

'' - पहिली उमिर में देवर को रखे थी

- अपना आदमी बडा सिधा था, बिलकुल गउ !

- लडके तीनो, अच्छे कमाते है।

- कमाएँगे क्यों नहीं ? मुखिया का आउर इन तीनों

- का पेट एक ही है मटिया तेल, चिनी कपडा

- सब कुछ तो भोकसते है !!''[48]

यहाँ स्पष्ट है गाँव लोगों को अपना धर्मात्मा का एक रुप सहुआइन ने दिखाया है तो दुसरी ओर अवैध संबंध प्रस्थापित किये है। इसी तरह यहाँ यौन संबंधों का चित्रण मिलता है। साथ ही 'नई पौध' के खोखा पंडित नारी विक्रय करते है इसका भी चित्रण मिलता है।

ग्रामीण जन-जीवन में शिक्षा का अभाव, अज्ञान, परस्पर वैमनस्य, नारी का दुय्यम स्थान आदि के कारण लोग अवैध यौन संबंधों के आधिन हो जाते है। इसी में रुढी, परंपरा, धर्म का पालन, नारी का बाल विवाह, अनमेल विवाह के कारण विधवा पन आदि कई कारणों से ग्रामीण जन-जीवन में अवैध संबंधों की निर्मिति होती है। धीरे-धीरे नारी की स्थिति बदल गई है। वह शिक्षा ग्रहण करने लगी है। गाँव में भी शिक्षा का प्रसार हो गया है लेकिन फिर भी यह यौन-संबंधों की समस्या खत्म नहीं हुओ है। स्त्री-पुरुष का पारस्पारिक आकर्षण, विज्ञान युग का प्रभाव, पाश्चात्य संस्कृति का अनुकरण आदि कई कारणों से इस समस्या ने आज भयावह रुप धारण कर लिया है। आज विश्व में यह समस्या महत्वपूर्ण हो गयी है।

7) अन्य विविध समस्याएँ :-

भारतीय ग्रामों में लोगों का जीवन बहुविध अभावों से भरा हुआ है। इन ग्रामों में अनेक समस्याएँ स्थित है। जो उनके सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, मानसिक, शारीरिक धरातल पर शोषण का आयाम बनी है। नागार्जुन के उपन्यासों में चित्रित ग्रामजीवन की समस्याएँ इस अध्याय के अंतर्गत कई महत्त्वपूर्ण समस्योंपर विचार किया है। यहाँ इस जीवन से जुडी अन्य कई विविध समस्याओंपर हम सोचेंगे जिनका जिक्र आलोच्य उपन्यासों में किया है।

1) नशापान की समस्या :-

गाँवों के बहुतांश लोग आज भी नशापान के चंगुल मे फँसे हुए देखने को मिलते है। गाँजा, शराब, तंमाकू आदि कई प्रकार की आदतें ग्रामीण जनों में दिखाई देती है। कभी-कभी अंधविश्वास के कारण यह व्यसनाधिनता और बढ़ती है, यह एक लत बन जाती है। नागार्जुन के 'रतिनाथ की चाची' (1948) में जयनाथ भगवान का प्रसाद समझकर हररोज भाँग पीता है और आखिर में इसकी आदत ही पड जाती है।

'बलचनमा' में (1952) भी ठाकुर लोगों को दारु तथा भांग पिने का शौक है। एक बार नहीं तो दिन में दो-दो बार। मध्यमवर्ग में तमाकू और ताडी का लोगों को शौक है। 'बाबा बटेसरनाथ' (1954) में जैकिसुन के साथियों को बीड़ी पीने की आदत है।

'दुखमोचन' (1957) में भी गाँव के लोग हुक्का पिते थे इसका चित्रण मिलता है। हरकू की माँ हुक्का पीती थी और इसी वजह से ही गाँव में आग फैली थी। गाँव में नित्याभाई जैसे लोग आफीम भी लेते थे। इसी तरह नागार्जुन ने नशापान की समस्यापर प्रकाश डाला है। इससे स्पष्ट है - अज्ञान, अशिक्षा के कारण ग्रामवासी नशापान करते है। अपनी पीडा भुलने के लिए नशा करनेवाले लोग दिखाई देते है। अवैध धंदों के कारण इसे बढ़ावा मिल रहा है ऐसा यहा स्पष्ट होता है।

2) दारिद्रयता तथा भूख की समस्या :-

गरीबी शहरों में भी है, लेकिन गाँवों में उसकी स्थिति भयावह है। शहर में राहत के दुसरे रास्ते है लेकिन गाँव में गरीबी रेखा के नीचे रहनेवालों का प्रतिशत भी कहीं अधिक होता है, इसलिए कहा जाता है कि गाँव और गरीबी में प्रमेय-प्रमाण संबंध है।''[49] औद्योगिकरण का अभाव, अर्थाभाव, अशिक्षा के कारण ग्रामीण जीवन में दरिद्रता के दर्शन होते है। नागार्जुन के उपन्यासों में अनेक जगह इसका चित्रण हुआ है। नागार्जुन ने 'रतिनाथ की चाची' (1948) में कुल्ली राउत का जीवन जमीनदारों की जूठन खाकर व्यतीत होता है। तथा रतिनाथ द्वारा किताबों की चोरी करना आदि से गरीबी के दर्शन होते है।

'बलचनमा' (1952) का खुद बलचनमा जमीनदारों के यहाँ काम कराकर उनका जूठन खाकर तथा उन्होंने दिया हुआ पहनकर, ओढ़कर अपना जीवन चलाता है।

'नई पौध' (1953) में चतुर्भुज जो माहे का पिता है। वह गरीब था। खोखा पंडित का चचेरा भाई था। पंडित उसकी थोडी जमीन थी। वह भी हथियाना चाहता था। चतुर्भुज के मरने के बाद भी खोखा पंडित माहे की माँ को परेशान करता था। इसीतरह चतुर्भुज को गरीबी विरासत में बाप दादा से बेचारे को यह संपदा मिली थी। नागार्जुन कहते है - ''मूर्खता, गरीबी, दश कठ्ठा उसर खेत और आठ धूर बासभूमि - विरासत में बाप-दादों से बेचारे को यह संपदा मिली थी।''[50] इसीतरह गाँव के गरीब लोगों को खोखा पंडित जैसे आदमी अत्याचार करते है। यह स्पष्ट होता है।

'बाबा बटेसरनाथ' (1954) का शत्रुमर्दन राय केवल अपने कर्ज के कारण अपनी जान गँवा बैठता है। इसीतरह यहाँ स्पष्ट होता है कि गरीबी के कारण लोगों की जान भी जाती है। और अमीर, पूँजिपति लोग, जमीनदार लोग इनका शोषण करते है। उनके गरीबी से उन्हें कोई लेना देना नहीं होता। इसीतरह गरीबों पर अत्याचार वह करते है।

'दुखमोचन' में रामसागर की माँ के अंतिम संस्कार में जलाने के लिए लकडिया नहीं थी जो थोडी बहुत थी वह बारिश की वजह से गिली हो चुकी थी। गाँव में दुसाधों, जुलाहों, कायस्थ, जत्थें, गरीब किसान - खेतमजदूर आदि की संख्या ज्यादा थी। और गरीबी की वजह से लोगों को मजदूरी करनी पडती थी। और जमीनदारों द्वारा उनका शोषण होता था। स्पष्ट है - ग्रामीण जन-जीवन में गरीब तथा दरिद्रता की स्थिति बडी भयावह नजर आती है।

3) प्राकृतिक आपदा की समस्या :-

गरीबी की स्थिति ही बडी कष्टप्रद होती है। जब गरीबों के साथ अकाल और बाढ़ जैसी प्राकृतिक आपदाएँ जुड जाती है तो उसका रुप भी भयावह हो जाता है। नागार्जुन ने अपने उपन्यासों में इसपर प्रकाश डाला है। 'रतिनाथ की चाची' में मलेरिया के प्रकोप से कई आदमी मर जाते है। डॉक्टर, वैद्य का कोई प्रभाव नहीं होता। चाची की मृत्यु भी उसमें हो जाती है।

'बलचनमा' में नागार्जुन ने अकाल, बाढ़ और भूचाल की समस्याओं का चित्रण किया है। जलसीम में तरकारी का काम चलता है। भूइयाँ मुसहर मछलियों पर गुजारा करते है। अकाल की वजह से धान नहीं होते, तरकारी, फल फूल आदि नहीं मिलती। कोठी के बखारी में धान-चाऊर अकाल की वजह से भरा नहीं रहता। इसीलिए महंगी अकाल में महीनों मछरी पर गुजारा लोग करते है।

माघ के महिने में बडे जोर से भूचाल आया था। गाँव में सबके मकान गिर गये थे। सरकारी बंगले, पोस्ट ऑफिस, थाना, कचहरी, जहल, अस्पताल इस्कूल बेकार हो गये थे। सडके फँट गये थे। रेल्वे लाईन अलग-अलग हो गयी थी। तार के खंबे झूलने लगे थे। डिप्टि साहब की नई नवेली औरत सो रही थी, वह अंदर ही रह गयी। गाँव के बहौत लोगों का नुकसान हुआ - ''महापूर में खान बहादुर का भी मकान गिर पडा था। बल्ली बाबू का भोटिया घोड़ा दब गया। गोसाई पोखर के उत्तर थोडी दूर हटकर जो मैदान है उसमें भारी दरार पड गई, उसमें तारी आमत की बछिया धँस के दब मरी थी।''[51] इसीतरह आसपास गाँवों में भी भूचाल की वजह से बहौत नुकसान हुआ था। स्पष्ट है कि प्राकृतिक आपदा की वजह से गाँव के लोगों का नुकसान तो होता ही, लेकिन उन्हें मदत करने में सरकार भी उपेक्षा करती है।

'बाबा बटेसरनाथ' में अकाल का बडा ही धार्मिक मार्मिक चित्र प्रस्तुत हुआ है। रुपडली गाँव अकाल के कारण भूख की पीडा से टूट रहा था। मामूली हैसियत के लोग शंकरकंद बनाम अल्हुआ की शरण ले चूके थे, तो खेतमजदुर आम की सूखी गुठलियाँ चूर-चूर कर महुआ का आटा मिलाकर टिक्कड बनाते और भूख को शांत करते थे। उसीतरह रुपडली गाँव पर बाढ़ का प्रकोप भी हुआ था। कृषक वर्ग तो निरंतर विपन्नता में पहुँच चुका था।

'दुखमोचन' में बाढ़ की समस्या का खुलकर वर्णन आया है। बाढ की वजह से कुओं का पानी गंदा हो गया था। और लोगों को इसी वजह से मलेरिया और कालाजर आदि बीमारियाँ फैली थी। इसीतरह बाढ के पानी में जहरिला असर होने से यह बीमारी की समस्या फैल गयी थी। गाँव में आग की समस्या का भी चित्रण किया है। गाँव में लगी आग की वजह से पूरा गाँव तबाह हो गया था। लोगों के घर जल गये थे। पशु और पंच्छीओं को भी नुकसान हुआ था। इसीतरह गाँव में मानवीय समस्याओं के साथ-साथ प्राकृतिक समस्या भी पैदा होती थी। और लोगों को उसका सामना करना पडता था।

इसीतरह प्राकृतिक आपत्तियों से सबसे अधिक हानी मध्य वर्ग या निम्न वर्ग के किसान, मजदूर, आदि को पहूँचती है। एक ओर जमीनदारों और साहुकारों के शिकंजे में जकड़ा सामान्य जन छटपटा रहा था तो दुसरी ओर इन दैवी प्रकोपो ने तो जैसे उसकी कमर तोड रख दी हो। अकाल, बाढ़, बीमारी, भूचाल जैसी आपत्तियों ने किसानों के आर्थिक संकट में वृद्धि की है। ये दैवी आपदायें जनशक्ति और धन शक्ति दोनों का ही नाश करती है।

ग्रामीण जन-जीवन में इन प्रमुख समस्याओं के अतिरिक्त और भी कुछ समस्याएँ है जिनका गौण रुप में उल्लेख किया है, जिसमें याता-यात की सुविधा का अभाव, डाकखाना, अस्पताल का अभाव, भौतिक सुविधाओं का अभाव, मनोरंजन, मुद्रण व्यवस्था, बिजली, औद्योगीकरण, पीने का पानी, जलसिंचन, खेती का नया ज्ञान आदि सुविधाओं से वंचित ग्राम के दर्शन होते है।

अत: स्पष्ट है - आज भी ग्राम जीवन कई समस्याओं से घिरा है। इनमें से कुछ समस्या पर मानवनिर्मित, कुछ प्राकृतिक, कुछ सामाजिक रही है। समस्या कौन सी भी रही हो सजगता, एकता के साथ उसे सुलझाया जाय तो हल होगी ऐसा लगता है।

निष्कर्ष :-

आँचलिक उपन्यासकार नागार्जुन के उपन्यासों में चित्रित ग्रामीण जीवन की समस्याएँ इस अध्याय में अंधविश्वास की समस्या, शोषण की समस्या, नारी शोषण, जातिय भेदाभेद की समस्या, भ्रष्टाचार की समस्या, यौन संबंधों की समस्या इन प्रमुख समस्याओं पर विस्तार के साथ सोचा है। इन समस्याओं के अतिरिक्त याता-यात के साधनों की कमी की समस्या, चिकित्सालयों एवं स्कूलों की कमी की समस्या, नशापान की समस्या, प्राकृतिक आपदा की समस्या, भूख की समस्या आदि समस्याये गौण रुप में आलोच्य उपन्यासों में समाकलित की गई है।

आलोच्य उपन्यासों के आधार पर ग्रामीण जन-जीवन में स्थित अंधविश्वास की समस्या देखने को मिलती है। इसमें बीमारी को मिटाना, अच्छी फसल की पैदास के लिए बलि देना, शरीर गोंदना, बलि चढाना, बरखा के लिए ग्याहर लाख शिवलिंग बनाना, मेंढक को कुचलना, संकट से मुक्ति के लिए देवी-देवताओं से प्रार्थना करना, पाप मुक्ति के लिए देवी-देवता से प्रार्थना करना तथा प्रायश्चित के लिए सत्यनारायण भगवान की पूजा करना, काशी (सिमरिया घाट) जाकर स्नान करना, मनौतिया मनाना, अतृप्त एवं असंतुष्ट मृत आत्मा तथा भूत पिशाच्च से मुक्ति पाना, कटोरा चलाना, पित्तर पिच्छ के दिन ब्राह्मणों को भोजन खिलाना आदि के बारे में अंधविश्वास है जिसके कारण अंधविश्वास की समस्या निर्माण हो रही है। आज इस स्थिति में परिवर्तन आया। शिक्षा के प्रचार एवं प्रसार के कारण लोग इन पर कम मात्रा में विश्वास करने लगे है। अंधश्रद्धा निर्मुलन समिति भी योगदान दे रही है।

शोषण समस्या के अंतर्गत जमीनेदारों द्वारा शोषण की समस्या, पुलिस शोषण की समस्या, अंग्रेज अफसरोंद्वारा शोषण की समस्या और नारी शोषण की समस्या आदि पर सोचा है। जमीनेदारों द्वारा शोषण की समस्या के अंतर्गत जमीनदारों द्वारा किसानों की जमीने हडप करना, सूद

के बदले किसानों से वेठबिगार लेना, किसान मजदूरों के औरतों का शारिरिक शोषण करना, किसानों पर झूठे इल्जाम लगाकर उन्हें जेल भेजना, उनकी पिटाई करना, फसलों को नष्ट करना, किसानों को हमेशा दबाव में रखना आदि जमीनदारों के शोषण के विविध आयाम ग्रामीण उपन्यासों में लक्षित होते है। धीरे-धीरे इस स्थिति में काफी परिवर्तन हो रहा है। अब जमीनदारी प्रथा कानून से नष्ट हो चुकी है। परंतु जमीनदारों की पुरानी ऐंठन और पुराने हथकंडे आज जमीनदारों के वंशज द्वारा अपनाये जा रहे है। इसका परिचय कहीं-कहीं मिल जाता है। लेकिन उस पर जन-जागृति, जनता की एकता, संगठन व्यक्ति के द्वारों जमीनदारों द्वारा होने वाला शोषण को रोका जा सकता है। उपन्यासों में इसके भी दर्शन होते है। नागार्जुन के 'रतिनाथ की चाची','बलचनमा', 'नई पौध', 'बाबा बटेसरनाथ', 'दुखमोचन' आदि उपन्यासों में इसका चित्रण मिलता है।

पुलिस शोषण के अंतर्गत बेकसूर लोगों की पिटाई करना, रिश्वत लेना, जमीनदारों से दांत-काठी-रोटी का संबंध रखना, गरीब किसानों का शोषण करना आदि पुलिस द्वारा शोषण के विविध हथकंडे आलोच्य उपन्यासों में देखने को मिलते है।

धार्मिक व्यक्तिद्वारा शोषण के अंतर्गत धर्म के नाम पर ग्रामीण लोगों को ठगाना, श्राद्ध द्वारा पैसे ऐंठना, भगवान का प्रसाद मानकर लोगों को भाँग पिलाना, झाड-फूँक, जादू-टोना, पूजा-पाठ आदि के द्वारा लोगों में श्रद्धा निर्माण करना, ब्रह्म की स्थापना करने के लिए कहना आदि शोषण के रुप दिखाई देते है। 'दुखमोचन' में धार्मिक अंधविश्वास का चित्रण मिलता है। उसमें मास्टर टेकनाथ का बैल आग में झूलसकर मर जाने पर टेकनाथ पर ही पाप लगता है और उसे उसी पाप का प्रायश्चित भी कराने को लोग कहते है। इसीतरह धार्मिक व्यक्ति, पंडित आदि लोग ऐसे पाप को प्रायश्चित के लिए पूजा करना, ब्राह्मणों को भोजन देना, पूरोहित को धन देना आदि करने को कहते है। इसी तरह धार्मिक व्यक्ति धर्म के नामपर लोगों को लूटना, व्यभिचारी प्रवृत्ति को बढावा देना आदि प्रवृत्तियाँ उनमें होती है। धार्मिक व्यक्ति लोगों की भावना के साथ खेलते है, उनकी श्रद्धा का फायदा उठाकर उनकी श्रद्धा का मजाक उडाते है, धन कमाते है। आज भी ब्राह्मण, पूजा-पाठ आदि पर लोग विश्वास करते है।

'बाबा बटेसरनाथ' (1954) में अंग्रेज अफसरों द्वारा जनता का शोषण करने का चित्रण आया है। अंग्रेजों द्वारा जनता का शोषण हो रहा था, वह उनकी पिटाई करते थे, जाति के आधार पर जवानों को फौज में स्थान देते थे सलाम न करने पर लोगों को पिटते थे। जमीन पर लगान थोपते थे, आदि का परिचय यहाँ मिलता है। शोषण की समस्या में अंग्रेजों के द्वारा शोषण यह एक समस्या का चित्रण नागार्जुन ने किया है।

नारी शोषण के अंतर्गत नारी को जीवनसाथी चूनने का अधिकार न होना, जमीनदारों द्वारा नारी का शारीरिक शोषण करना, परिवार की सेवा करना, परिवार के सदस्यों द्वारा शोषण होना, बहुविवाह, अनमेल विवाह, विधवा का जीवन यापन करना, रखेल प्रथा आदि के कारण नारी का जीवन असुरक्षित रहना तथा विधवा गौरी के लिए रुढ़ी-नियम को कडे करना, पुर्नविवाह का अधिकार न होना, वैधव्य जीवन में अवैध संबंध रखना और उसे अवैध मातृत्व के लिए बाध्य करना ऐसी स्थिति में उसे समाज में छोडकर चले जाना आदि कई रुपों में नारी शोषण देखने को मिलता है। आज भी किसी न किसी तरह ग्रामीण नारी का शोषण होता आ रहा है।

जातीय भेदाभेद की समस्या के अंतर्गत जातिबाह्य विवाह का विरोध, गोत्र बाह्य विवाह को प्रतिबंध, जातिबाह्य कर्म का विरोध, मंदिर, पाठशाला पर भेदाभेद का प्रचलन, अछूतों को दवाइयाँ दूर से देना, अछूतों की हत्या करना, जमीनदारों, पुलिसोंद्वारा अछूतों का शोषण, जातीयताके आधारपर संघर्ष होना, अपनी ही जाति श्रेष्ठ बनाने का प्रयत्न करना आदि आयामों के माध्यम से आलोच्य उपन्यासों में ग्रामीण जन-जीवन में स्थित जातीय भेदाभेद की समस्या पर गहराई से सोचा गया है। आज ग्रामांचलों में शिक्षित, प्रगतिवादी युवक जातीय भेदाभेद के खिलाफ आवाज उठाकर जातीय एकता प्रस्थापित करना चाहते है। 'बाबा बटेसरनाथ' के जैकिसुन और उसके साथी इसके प्रतीक है।

भ्रष्टाचार की समस्या के अंतर्गत जमीनदारों, महाजनों के साथ दात-काठी-रोटी का संबंध स्थापित कराके पुलिसोंद्वारा भ्रष्टाचार करना, जंगल कटाई करके अवैध मार्ग से लकडिया बेचना, राजनीतिक दल-बदलाव के लिए भ्रष्ट नीति को अपनाना, पुलिसद्वारा रिश्वत लेना और रिश्वत लेकर

बेकसूर किसानों को झूठे जुल्म में बंद करना, अपने फायदे के लिए अधिकारीयों को रिश्वत देना आदि कई भ्रष्टाचार के प्रकार उपन्यासों में लक्षित होते है।

अशिक्षा की समस्या के अंतर्गत ग्रामीण परिवेश में शिक्षा-दीक्षा के प्रति अनास्था, शिक्षा की असुविधा, शिक्षालयों की कमी के कारण उनमें अशिक्षा की मात्रा का बढ़ना आदि अनेक बाते यहाँ लक्षित होती है। इन लोगों को शिक्षा का महत्त्व अधिक मात्रा में समझ में नहीं आ रहा है, परंतु धीरे-धीरे सरकारी विकास योजना के माध्यम से और अनुदान विषयक सरकार की उदारनीति के कारण ग्रामीण जन-जीवन में शिक्षा-दिक्षा का प्रसार एवं प्रचार हो रहा है। नारी शिक्षा पर भी आज ध्यान दिया जा रहा है। 'रतिनाथ की चाची', 'बाबा बटेसरनाथ', 'नई पौध' आदि में शिक्षा की स्थिति पर प्रकाश डाला गया है। यौन संबंधों की समस्या पर आलोच्य उपन्यासों में विचार किया है। इस समस्या के अंतर्गत विवाह पूर्व यौन संबंध, बहुविध पुरुषों से यौन संबंध, अनमेल यौन संबंध, परिवार में स्थापित रिश्ते बाह्य यौन संबंध आदि अवैध यौन संबंधों के विविध आयाम उपन्यासों में देखने को मिलते है। यह भी समस्या आज समाज में भयावह बन गई है इस ओर भी उपन्यासकार ने अंगुली निर्देश किया है।

इसके अलावा अस्पताल, डाकखाना, नशापान, शिक्षालयों की असुविधा, याता-यात की सुविधा का अभाव आदि कई समस्याओं पर आलोच्य उपन्यासों में सोचा गया है। उसके कारण ग्रामीण जनों का होने वाला शोषण, उपेक्षा आदि के दर्शन हो जाते है।

अत: यह स्पष्ट है कि ग्राम जन-जीवन समस्या और अभावों में अटका हुआ है। प्राकृतिक आपदा, जातीय भेदाभेद, भौतिक असुविधा, अशिक्षा, असहयोग आदि कई कारणों से समस्याएँ बढ़ रही है, सरकार की उदारनीति, जनसंगठन सहयोग, समाजसेवी संस्था का सहयोग मिले तो सभी समस्याएँ हल हो सकती है। जब तक समस्याएँ रहेगी तब तक विकास की गति धीमी रहेगी। रामराज्य ग्रामराज्य का सपना 'सपना' ही रहेगा ऐसा लगता है।

शिक्षा सुविधा, शिक्षा के प्रति जागृति, अध्यापकों की नियुक्ति, नई शिक्षा, प्रौढ शिक्षा का प्रसार एवं प्रचार हो तो, अज्ञान की समस्या हल होगी। अज्ञान से उत्पन्न अंधविश्वास की

समस्या है। धर्म, धार्मिकता, ग्राम लोगों की भावुकता, बाह्याडंबर, रुढी परंपरा का खोखलापन स्पष्ट करे सही धर्म की जानकारी लोगों को दी जाये। समाजसेवी संस्था कार्यरत रहे तो अंधविश्वास की मात्रा कम होगी। अंधविश्वास कम होकर धर्म का सही अर्थ स्पष्ट हो जाये, मानवता धर्म का रुप स्पष्ट हो जाये तो जातीय भेदाभेद की समस्या अपने आप हल हो जायेगी। शिक्षा प्रसार से लोग अपने अधिकार के बारे में जागृत बनते है जो शोषण विरोध में विद्रोह करते है। परिणामत: शोषण से मुक्ति उनकी जिंदगी बनती है। नारी का भी जीवन इसी कारण स्वतंत्र, मुक्त आजाद बनेगा। शिक्षा प्रसार से भ्रष्टाचार को मिटाया जाता है। अवैध संबंधों पर रोक लगाई जाती है। विवाह, विधवा विवाह, पुर्नविवाह को समाज मान्यता मिलती है। नशापान से उत्पन्न खतरों के प्रति लोग अगाह करना है। परिणामत: नशापान, नशिली चिजों का त्याग का कार्य वे करते है। शिक्षा से नौकरी मिलेगी तो भूख, बेकारी, अवैध धंदे, शोषण जैसी समस्याएँ समाप्त होगी। अत: यहाँ स्पष्ट है सभी समस्याओं की जड़ अज्ञान है। इसीलिए साक्षरता, शिक्षा प्रसार, सभी समस्याओं के लिए महत्वपूर्ण उपाय है। जब ग्राम साक्षर शिक्षित होगा तब वह समस्या से मुक्त ही बनेगा। अज्ञान के अंध:कार को ज्ञान का दीया प्रकाश दे सकता है। और ज्ञान के लिए शिक्षा का होना बहौत जरुरी है ऐसा मुझे लगता है।

अत: यह स्पष्ट है की प्रगतिवादी उपन्यासकार नागार्जुन के उपन्यास ग्राम जीवन की झाँकी प्रस्तुत करने में सक्षम रहे है। ग्राम जीवन की सशक्त अभिव्यक्ति यह उपन्यास है। जीवन की विविधता एवं विशेषत: के साथ ग्रामजीवन की समस्याओं पर भी यथार्थ रुपमें सोचा है, ऐसा लगता है। नागार्जुन की निगाहों से कोओी समस्या छूटी नहीं। साथ-ही-साथ समस्याओं के निराकरण की भी चर्चा की है। उनके पात्र संघर्ष करनेवाले चेतित पात्र है। अन्याय, अशिक्षा, अंधश्रद्धा को मिटाने से सभी समस्याएँ समाप्त होगी। यही उनका मूल मंत्र रहा है। पूरा मिथिलांचन आलोच्य उपन्यासों में दिखाई देता है। भारत देश 'ग्रामों का देश' रहा है। ग्राम कहाँ का भी हो, उनकी समस्या समान ही होती है। इस दृष्टि से मिथिलांचन के गांवों की समस्याएँ भारतीय ग्रामों की रही है। ऐसा कहना अनुचित नहीं होगा। अत: नागार्जुन के उपन्यासों में भारतीय ग्रामजीवन की समस्याएँ यथार्थ रुप में चित्रित हुओी ऐसा मुझे लगता है। यह उपन्यास ग्रामजीवन एवं समस्या की तसबीर ही है।

संदर्भ सूची

1. फ्रान्सीस ई. मेरिल - 'सोसायटी ॲण्ड कल्चर', पृ.46.
2. विवेकी राय - 'स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कथा साहित्य और ग्रामजीवन', लोकभारती, इलाहाबाद, प्रथम संस्कारण, 1974, पृ.271.
3. रामलाल विवेक - 'आधुनिक भारत के निर्माता - पंडित जवाहरलाल नेहरु', श्याम प्रकाशन, जयपुर, प्रथम संस्करण 1989, पृ.136.
4. नागार्जुन - 'नई पौध', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1998, पृ.96.
5. नागार्जुन - 'बाबा बटेसरनाथ', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्कारण - 1954, पृ.50-51.
6. नागार्जुन - 'दुखमोचन', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1972, पृ.11.
7. अमर सिंह रणपतिया - 'हिमांचली लोकसाहित्य', सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1987, पृ. 167.
8. नागार्जुन - 'बलचनमा', किताब महल, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, पृ.52
9. नागार्जुन - 'बाबा बटेसरनाथ', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्कारण - 1954, पृ.55.
10. भगवती चरण शर्मा - 'चित्रलेखा', भारती भांडार, इलाहाबाद, 28 वा संस्करण 1988, पृ.175.
11. नागार्जुन - 'रतिनाथ की चाची', किताब महल, इलाहाबाद, प्र.सं.1948, पृ.83-84.
12. डॉ. बलवंत साधु जाधव - 'प्रेमचंद साहित्य में दलित चेतना', अलका प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1983, पृ.183.
13. पारसनाथ सिंह - 'प्रेमचंदकालीन उपन्यासों में ग्रामीण जीवन', कैपिटल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1986, पृ.86.
14. नागार्जुन - 'रतिनाथ की चाची', किताब महल, इलाहाबाद, प्र.सं.1948, पृ.55.

15. नागार्जुन - 'बलचनमा', किताब महल, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण,1952, पृ.5.

16. वही, पृ.25.

17. नागार्जुन - 'बाबा बटेसरनाथ', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्कारण - 1954, पृ.37.

18. वही, पृ.43.

19. वही, पृ.143.

20. नागार्जुन - 'नई पौध', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1998, पृ.66.

21. बाबूराम गुप्त - 'उपन्यासकार नागार्जुन', प्रकाशन श्याम प्रकाशन, जयपुर, प्रथम संस्करण - 1985, पृ.147.

22. नागार्जुन - 'बाबा बटेसरनाथ', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्कारण - 1954, पृ.87.

23. बाबूराम गुप्त - 'उपन्यासकार नागार्जुन', प्रकाशन श्याम प्रकाशन, जयपुर, प्रथम संस्करण - 1985, पृ.35.

24. नागार्जुन - 'रतिनाथ की चाची', किताब महल, इलाहाबाद, प्र.सं.1948, पृ.58.

25. नागार्जुन - 'दुखमोचन', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1972, पृ.167.

26. नागार्जुन - 'रतिनाथ की चाची', किताब महल, इलाहाबाद, प्र.सं.1948, पृ.85-86.

27. नागार्जुन - 'नई पौध', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1998, पृ.10.

28. 'आलोचना' - जुलाई-सितंबर 1972, पृ.55.

29. डॉ. देवेश ठाकुर - 'मैला आंचल की रचना प्रक्रिया', वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1987, पृ.68.

30. नागार्जुन - 'रतिनाथ की चाची', किताब महल, इलाहाबाद, प्र.सं.1948, पृ.54.

31. वही, पृ.55.

32. नागार्जुन - 'बलचनमा', किताब महल, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण,1952, पृ.56.

33. नागार्जुन - 'दुखमोचन', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1972, पृ.78-79.

34. नागार्जुन - 'रतिनाथ की चाची', किताब महल, इलाहाबाद, प्र.सं.1948, पृ.47.

35. वही, पृ.99.

36. नागार्जुन - 'बलचनमा', किताब महल, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण,1952, पृ.56.

37. वही, पृ.167.

38. नागार्जुन - 'नई पौध', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1998, पृ.9.

39. वही, पृ.9.

40. नागार्जुन - 'बाबा बटेसरनाथ', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्कारण - 1954, पृ.123.

41. नागार्जुन - 'नई पौध', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1998, पृ.9-10.

42. नागार्जुन - 'बाबा बटेसरनाथ', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्कारण - 1954, पृ.17.

43. वही, पृ.20.

44. नागार्जुन - 'दुखमोचन', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1972, पृ.20.

45. गणेश प्रसाद पांड्ये - 'आठवे दशक की हिंदी कहानी में ग्रामजीवन', राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1999, पृ.107.

46. 'धर्मयुग' - फरवरी 1976, पृ.18.

47. नागार्जुन - 'रतिनाथ की चाची, किताब महल, इलाहाबाद, प्र.सं.1948, पृ.67.

48. नागार्जुन - 'नई पौध', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1998, पृ.74.

49. गणेश प्रसाद पांड्ये - 'आठवे दशक की हिंदी कहानी में ग्रामजीवन', राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1999, पृ.107.

50. नागार्जुन - 'नई पौध', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1998, पृ.13-14.

51. नागार्जुन - 'बलचनमा', किताब महल, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण,1952, पृ.163-164.

---xxx---